Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

8
9/33A

भागवतवाणी

साहित्य प्रकाशन

३

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

9/33A

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

C0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varana

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'

9/33

आनन्द वाणी

भाग—३

(संन्यास जयन्तीके अवसरपर विशेष प्रकाशन)

★

पूज्यपाद अनन्तश्री स्वामी
अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराजकी
पावन वाणीका प्रसाद

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकाशक :
ब्र. प्रेमानन्द 'दादा'
सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट
'विपुल'
२५५-ए/१६, रिज रोड,
मलबार हिल, बम्बई–६
फोन : ७७९७६

मूल्य रु. १

मुद्रक :
आर. बी. गुप्ता
चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, कालबादेवी, बम्बई–२.

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"तस्माद् आत्मज्ञं ह्यर्चयेद् भूतिकामः"

कल्याणकामी पुरुषको आत्मज्ञानी
महात्माकी पूजा करनी चाहिये,
क्योंकि उसके संकल्पके
अनुसार सब कुछ
होता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● प्रकाशकीय :

आपने बड़ी श्रद्धा, आदर और प्रेमसे 'आनन्द-वाणी' के दो भागोंका श्रवण-मनन और धारण किया है। आपकी इस स्वाध्यायनिष्ठाका सम्मान करनेके लिये प्रकाशनके दूसरे वर्षमें हम अब 'आनन्द-वाणी'का तृतीय भाग लेकर आपके सम्मुख उपस्थित हो रहे हैं। आपको ज्ञात ही है कि विभिन्न भक्तोंने महाराजश्रीके प्रवचन, पत्र, वार्तालाप आदिसे जो कुछ बूँद-बूँद अमृत जोड़ रखा है, यह उसीका संग्रह है। यदि आपके पास भी महाराजश्रीके प्रवचन, वार्तालाप अथवा चरित्र सम्बन्धी संस्मरण हों तो लिख भेजिये। आनन्द वाणीके अगले भागोंमें उनका उपयोग किया जायगा और हम सब आपके कृतज्ञ होंगे।

पाठकोंकी रुचि और आदरको देखते हुए महाराजश्रीकी संन्यास जयन्तीके अवसरपर आनन्दवाणीके कलेवर एवं सज्जाको समृद्ध किया जा रहा है। हमें पूर्ण आशा है कि आप इससे प्रसन्न होंगे।

बम्बई
संन्यास जयन्ती-२०१९ } ब्र. प्रेमानन्द 'दादा'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
१ विष्णु सूक्त	१
२ उद्बोधन	४
३ समाधि भंग (कविता)	१३
४ तितिक्षाकी शक्ति कहाँसे	१४
५ प्रवचन प्रभावहीन क्यों ?	१६
६ निष्ठा (कविता)	१६
७ भगवद्भक्ति	१७
८ विश्वास	१८
९ भजनका स्वरूप	१९
१० ईश्वर मुझे पहचानता है	२१
११ कहाँ बैठे हो ?	२६
१२ भक्तकी स्थिति	२७
१३ ध्यानके समय नेत्रकी स्थिति	३१
१४ भगवान् भोजन पहुँचाते हैं	३२
१५ साधन-पथ	३३
१६ महात्माका अनुभव	३५
१७ चाकू मित्रके हाथमें	३८
१८ दुर्गुण और सद्गुण	३९

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

१९ पतिकी पहचान ४०
२० प्रेम रसायन ४१
२१ प्रेम आश्चर्य है ४४
२२ धरती अधरमें ४५
२३ पतिपर विश्वास ४६
२४ जीवन ही व्यर्थ है ४६
२५ राजा काहेका ४९
२६ त्यागी कौन ५०
२७ मिथ्या अभिमान ५०
२८ अर्पणका स्वरूप ५१
२९ लालसा ५१
३० सार्थक जीवन ५२
३१ दृष्टि ईश्वरपर ५३
३२ मन्त्रका अर्थ ५४
३३ वाह गुरु ६०
३४ प्रेमामृत ६२
३५ ज्ञान कणिका ६९
३६ सद्गुण सबमें हैं ७७
३७ सुखकी कुंजी ८०
३८ सुख ८१
३९ स्वरूपको जानो ८५
४० चित्रशालाकी महिमा ८६
४१ भेद कहाँ ८८
४२ उपलब्धि ही सुख है ९०

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

४३ पसन्दका संसार ९१
४४ मस्ती और निष्ठा ९२
४५ शान्तिका उपाय ९३
४६ बन्धन कहाँ ९४
४७ गिलास साफ कर लो ९५
४८ मोक्ष आत्माका स्वरूप ही है ९६
४९ मानसके वासी हंस १००
५० संन्यास १०१
५१ प्रपन्न प्रार्थना १०५

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

॥ श्रीहरिः ॥

विष्णु सूक्त

(महाराजश्रीके द्वारा अनूदित)

अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे ।
पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥१॥

'क्योंकि सर्वव्यापी भगवान् विष्णुने गायत्री आदि सात छन्दरूप साधनोंके द्वारा पृथ्वीपर विविध प्रकारसे अपने चरण स्थापित किये हैं अर्थात् विविध प्रकारके जय करने योग्य मन्त्र-साधनोंके द्वारा हम पृथ्वी निवासियोंके पाप दूर किये हैं, असुरोंको पराजित करके देवताओंको विजय प्राप्त करायी है, इसलिये सब देवता हमारी रक्षा करें अर्थात् हमारे जीवनमें आसुरी सम्पत्ति न आने पाये, दैवी सम्पत्तिकी वृद्धि हो ।'

*

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ।
समूढमस्य पांसुरे ॥२॥

'सम्पूर्ण विश्वमें व्यापक अथवा प्रविष्ट भगवान् विष्णुने इस प्रतीयमान जगत्में विविध प्रकारसे अपना पादविन्यास किया। उन्होंने ही त्रिविक्रम अवतार धारण करके तीन प्रकारसे अपने पदका स्थापन किया। यह सम्पूर्ण सृष्टि अपने कारण मायाशक्ति सहित उनके एक चरणके धूलिकणमें समायी हुई है।'

त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ।
अतो धर्माणि धारयन् ॥३॥

'भगवान् विष्णु अविनाशी हैं। उनके नाशका सामर्थ्य किसीमें नहीं है। वे ही सबके रक्षक हैं। उन्होंने अपने केवल तीन पादोंका विन्यास किया है। इसीसे वे त्रिलोकीके धर्मोंकी रक्षा करते हैं।'

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे ।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥४॥

'देखो, देखो! भगवान् विष्णुके कर्म कि वे कैसे-कैसे सृष्टिका पालन-पोषण कर रहे हैं। उन्हींकी शक्ति और अनुग्रहसे सभी जीव अपने धर्म और व्रतका अनुष्ठान करनेमें समर्थ होते हैं। वे इन्द्रके योग्य सखा हैं अथवा द्रष्टा त्वं पदार्थसे एक होने योग्य तत् पदार्थ हैं।'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।
दिवीव चक्षुराततम् ॥५॥

'जैसे नेत्र आकाशमें फैलकर सब कुछ देख लेता है अथवा जैसे आकाशमें सूर्यका विस्तृत प्रकाश देखा जाता है, वैसे ही श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष भगवान् विष्णुके उस परम पद अर्थात् प्रत्यक् चैतन्याभिन्न ब्रह्मस्वरूपका सदा सर्वदा अपरोक्ष अनुभव करते हैं ।'

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते ।
विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥६॥

'श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण व्यवहारमें लिप्त नहीं होते, नित्य निरन्तर परमात्माके चिन्तनमें जाग्रत् रहते हैं । वे ही भगवान् विष्णुके उस अनिर्वचनीय वाङ्मनसागोचर सर्वोपरि विराजमान ब्रह्मपदको प्रदीप्त करते हैं अर्थात् जिज्ञासुओंको उपदेश करके साक्षात्कार कराते हैं ।'

—ऋग्वेद

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उद्बोधन

तुम जितना जानते हो, उसका शतांश भी अपने जीवनमें उतार लो तो तुम्हें और कुछ करनेकी आवश्यकता ही न रहे। तुमने अबतक जिसको सर्वश्रेष्ठ जाना है, उसको अपने जीवनमें ले आओ। तुम्हारे ज्ञानका अजीर्ण कहीं तुम्हारे जीवनको विशृङ्खल और उद्विग्न न कर दे।

* * *

तुम जिस विषयपर विचार करो, अपने जीवनकी दृष्टिसे करो। एक क्षणमें ही तुम्हें पता चल जायगा कि वह तुम्हारे जीवनको ऊपर उठाता है या नीचे गिराता है। तर्क और युक्तियोंके जालमें उलझ जाओगे तो तुम्हारा जीवन आश्रयहीन हो जायगा।

* * *

विचार करो—मेरे चित्तमें जो अशान्ति या असन्तोष है, वह किस अभावके कारण है? क्या मैं अनेक प्रकारके अभावोंसे घिरा हुआ हूँ? वह कौन-सी वस्तु है, जिसके प्राप्त होनेपर सारे अभाव पूर्ण हो जायँगे? निश्चय ही ऐसी वस्तु एकमात्र परमात्मा है। जबतक वे नहीं मिलेंगे, तबतक इस जीवनके अभावोंसे छुटकारा कहाँ? मैं तो उन्हें प्राप्त करके रहूँगा।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम्हारे चित्तमें जो इच्छा उठ रही है, उसकी पूर्ति जीवनके लिये कितनी आवश्यक है ? क्या उसके बिना तुम्हारा काम नहीं चल सकता ? कम-से-कम इच्छा करो। हो सके तो उसका नाश कर दो। जब तुम्हारी आवश्यकताओंको तुमसे अधिक जानने वाला और उनको पूर्ण करनेवाला विद्यमान है, तब तुम क्यों इच्छा करते हो ? उसपर विश्वास करो। तनिक सोचो तो उसको तुम्हारे हितका कितना ज्ञान और ध्यान है ?

* * *

देखो, तुम्हारे पास अनावश्यक वस्तुएँ कितनी हैं ? उनके बिना यदि संसारके बहुत-से प्राणी दुःखी हैं, तो तुम्हें क्या अधिकार है कि तुम उन्हें अपने पास रखकर सड़ाओ ? उचित तो यह है कि तुम अपनी आवश्यकताका विचार किये बिना ही दूसरोंकी आवश्यकता पूरी कर दो।

* * *

क्या तुमने आज किसीकी कुछ सेवा की है ? यदि नहीं तो आजका दिन तुमने खो दिया। यदि किसीकी कुछ सेवा की है तो सावधान रहो, मनमें कहीं अहंकार न आ जाय ! इस विशाल विश्वमें तुम्हारा कर्तृत्व कितना छोटा है। यदि इससे अधिक सेवा कर पाते तो क्या उत्तम होता !

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस समय तुम्हारी परीक्षा होती है, जब दूसरा कोई तुम्हारे साथ कटु व्यवहार करता है। कम से कम वैसा व्यवहार तो तुम्हें किसी औरके साथ नहीं करना चाहिये।

* * *

क्या ही अच्छा होता कि तुम जैसा बनना चाहते हो, वैसा बन जाते! परन्तु वैसा न बननेका कारण क्या है? तुम्हारी दुर्बलता। शरीर चाहे वहाँ तक न जा सके, मनसे जानेमें तो कोई अड़चन है ही नहीं। तुम जहाँ पहुँचना चाहते हो, मनसे वहीं जाकर बैठो। तुम देखोगे कि तुम्हारा शरीर और उसकी परिस्थितियाँ तुम्हारी सहायता कर रही हैं और तुम अपने प्रियतम प्रभुके पास हो।

* * *

आशा पूर्ण होगी, भगवान्से। निराशा पहुँचायगी, भगवान् तक। दोनोंके बीच लटको मत। दोनों ही मार्ग हैं। किसी एक को पकड़कर चल पड़ो। परमात्माकी ओर चलना, चलते रहना ही शुद्ध जीवन है। प्रेमीको विश्राम कहाँ?

* * *

यह तो तुम जानते ही हो कि तुम्हारी प्रत्येक क्रिया भेंटके रूपमें स्वीकार की जा सकती है, की जाती है। फिर वैसा करके तुम अपने प्राणोंको तृप्त क्यों नहीं कर लेते? अनुभव करो—जो कुछ मैं कर रहा हूँ, सब मेरे प्रभुके श्रीचरणोंमें भेंट है और वे बड़ी प्रसन्नतासे उस स्वीकार कर रहे हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम्हारे अन्तःकरणमें जितनी पवित्रता होगी, उतना ही अधिक तुम शान्ति और आनन्दका अनुभव कर सकोगे। भगवान् की कृपाका आश्रय लेकर सब पाप-ताप धो डालो और परमानन्दका अनुभव करो।

* * *

केवल भाव ही तो परिवर्तन करना है। जिसे जड़ जगत्के रूपमें देखते हो, उसे भगवद्रूप देखो। यह लीला है—लीला! इसे सत्य मानकर कार्य-कारण-विवेक मत करो। इस चिन्मयी लीलाकी यथार्थताको जान लो, फिर कहीं कभी शोक-मोह तुम्हारा स्पर्श नहीं करेंगे।

* * *

तुम्हारे अन्तस्तलमें एक दिव्य ज्योति रात दिन जगमगाती रहती है। उसे कामनाके परदेसे ढको मत; बल्कि उसे और भी प्रज्वलित करके सब कामनाओंको उसीमें भस्म कर दो। तुम्हारा यह हवन कितना पवित्र होगा!

* * *

तुम जो कुछ कर रहे हो, जो कुछ बोल रहे हो और जो कुछ सोच रहे हो, सब भगवान्के सामने। तब तुम्हें कितना सावधान रहना चाहिये?

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यदि इसी समय भगवान् तुम्हारे पास आ जायँ, जो कि उनकी दयालुताको देखते हुए बहुत सम्भव है, तो तुम उन्हें कहाँ बैठाओगे ? क्या तुमने बाहर या भीतर कहीं भी उनके बैठने योग्य स्थान तैयार रक्खा है ? अबसे अपने हृदयका कमरा उनके लिये साफ कर लो।

* * *

भगवान् आनन्दमय हैं, जगत् आनन्दमय है, तुम आनन्दमय हो। परन्तु यह आनन्द कहाँ छिपा है ? यह तुम्हारे अनुभवमें क्यों नहीं आता ? इसे ढूँढ़ निकालो और इस सत्यका साक्षात्कार करके आनन्दमय हो जाओ।

* * *

कभी तुम्हारे मनमें यह अहङ्कार तो नहीं आता कि तुम प्रेमी या ज्ञानी हो ? यदि ऐसा है तो अभी तुम्हें प्रेम या ज्ञानकी अनुभूति नहीं प्राप्त हुई। प्रतिक्षण बढ़नेवाले प्रेमको कहीं भी पूर्ण मान लेना, उतनेसे ही तृप्त हो रहना प्रेम नहीं, प्रेमाभास है। अपने अज्ञानको जानना ही सच्चा ज्ञान है। तुम सच्चे अर्थमें प्रेमी और ज्ञानी हो न ?

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने हृदयमें अनुसन्धान करो—मैं जिस समय कर्तव्यका उल्लङ्घन करता हूँ, या उपेक्षा कर देता हूँ, क्या उस समय उस कर्तव्यकी अपेक्षा श्रेष्ठ कर्ममें लगा रहता हूँ ? यदि शरीर-सुख अथवा स्वार्थके लिये मैं अपने कर्तव्यकी अवहेलना करता हूँ तो मैं तमोगुणी हो रहा हूँ। सुखी होनेका साधन है—सात्त्विकता, सदाचार और तत्परता। निश्चय करो, अब कभी मैं प्रमाद नहीं करूँगा।

* * *

जिस समय भगवान् हमारी इच्छाके विपरीत कुछ करते हैं, उस समय उनका वात्सल्य-स्नेह अत्यधिक प्रकाशमें आता है। वे हमारी इच्छाओंको अपनी इच्छाके अनुसार रखना चाहते हैं, यह उनकी कितनी कृपा है ! इससे उनकी देखरेखका पता तो चलता ही रहता है।

* * *

इस विशाल विश्वमें तुम कितने नन्हें-से शिशु हो, इसपर विचार करो। क्या तुम्हारी बुद्धि, छोटी-छोटी चीज़ोंके लिये मचल पड़ने वाली बुद्धि तुम्हारे सम्पूर्ण जीवनका हिताहित सोच सकती है ? यदि नहीं, तो परमात्माके अनन्त ज्ञान, शक्ति और कृपापर क्यों नहीं निर्भर हो जाते ?

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विश्वास करना ही पड़ता है—अपनी बुद्धिपर करो, चाहे परायीपर। क्या तुमसे अधिक बुद्धिमान् और तुम्हारा हितैषी दूसरा कोई नहीं है? फिर तो तुम्हारी रक्षाका कोई उपाय ही नहीं है। महापुरुषोंपर, शास्त्रोंपर विश्वास करो। सबसे उत्तम तो यह है कि भगवान् पर विश्वास करो।

* * *

विश्वास करनेके लिये आत्मबलकी आवश्यकता है। दुर्बल हृदय किसीपर विश्वास नहीं कर सकता। चरित्रभ्रष्ट पुरुष जितना जल्दी प्रभावित होता है, उतना ही जल्दी अविश्वास भी करता है। क्या तुम किसीपर विश्वास करते हो कि ये गला भी काट दें तो हमारा हित ही करते हैं? परमात्मापर ऐसा ही विश्वास करो।

* * *

जिसपर तुम विश्वास करते हो, वह तुम्हारा क्या बिगाड़ सकता है? अधिक-से-अधिक सांसारिक सुख-सम्पत्ति। क्या इसके त्यागके लिये तुम प्रस्तुत नहीं हो? यदि इसके बदले तुम्हारे अन्तःकरणको अतुलनीय आत्मबल, श्रद्धा, सहिष्णुता, अनासक्ति और समता प्राप्त होती है तो तुच्छ वस्तुओंकी हानिमें क्या रक्खा है? जहाँ तुम सन्देह करते हो, डरते हो, तुम्हारी ही कमज़ोरी है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम निर्भय रहो। क्योंकि यदि तुम परमात्माके प्रति हृदयसे सच्चे रहे तो तुम्हारी हानि कभी हो ही नहीं सकती। जिसे संसारी लोग हानि समझते हैं, वह तो साधकके लिये परम लाभ है। तुम केवल अपने हृदयको शुद्ध रक्खो। उसमें सन्देह और भयको मत आने दो। भगवान् तुम्हारे चारों ओर और हृदयमें रहकर तुम्हारी रक्षा कर रहे हैं।

* * *

तुम्हारे मनमें किसीपर क्रोध आता है तो सबसे पहले अपने पर क्रोध करो। क्योंकि अपने मनमें क्रोधको आश्रय देकर तुमने उस स्थानको भ्रष्ट किया है, जिसमें केवल प्रेमका निवास होना चाहिये।

* * *

क्या यह सत्य नहीं है कि तुम अपनी उस अमूल्य निधिकी बहुत कम सम्हाल करते हो, जिसके लिये यह संसार और जीवन है? जड़को काटकर शाखाको सींचना कहाँ की बुद्धिमानी है? तुम उसीको, केवल परमात्माको सम्हालते रहो।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुभव करो—मेरे हृदयके सिंहासनपर परमात्मा विराजमान हैं। मेरे प्रत्येक सङ्कल्प और क्रियाको वे देख रहे हैं। वे मुझसे खेल रहे हैं। मेरे खेलसे वे प्रसन्न हो रहे हैं। मैं कितना भाग्यवान् हूँ कि परमात्माके खेलका साधन बनकर उन्हें प्रसन्न कर रहा हूँ!

* * *

निश्चय करो—अब मैं कभी ऐसी चेष्टा या सङ्कल्प नहीं करूँगा, जो परमात्माके सङ्कल्पसे होने वाली किसी भी क्रिया-घटनामें असन्तोष प्रकट करता हो। मैं उनके विधानका हृदयसे स्वागत करूँगा।

* * *

विचार करो—मेरे चित्तमें अपने शरीर और उसके सम्बन्धियोंके लिये जो कामनाएँ हैं, वही प्रत्येक स्थितिमें समता अथवा भगवत्कृपाका अनुभव नहीं होने देतीं। मैं समस्त कामनाओंका नाश करके उसका अनुभव करूँगा। मेरा चित्त निष्काम और शान्त हो रहा है। मैं समता और कृपाका अनुभव कर रहा हूँ।

* * *

अनुभव करो—इस भावनामें डूब जाओ कि सर्वत्र भगवान् ही भगवान् हैं—जो कुछ मैं देख, सुन या सोच रहा हूँ, सबमें परमानन्दस्वरूप परमात्मा विद्यमान हैं। सबका रूप धारण करके नाना नामोंसे वही लीला कर रहे हैं। मेरा मन इस सत्यको पहचानकर मुग्ध हो रहा है, मस्त हो रहा है। मस्त हो जाओ!

★

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समाधि-भंग

खेल उससे खेल रे मन !
कर न निज जीवन विफल
यह विषमता मत झेल रे मन !
खेल उससे खेल रे मन !
आ रही मृदु मदिर मधुमय
गंध यह किस ओरसे रे !
गूँजता है मधुर वंशीस्वन,
भला किस छोरसे रे !
चल वहीं, मत रुक कहीं, अब कर उसीसे मेल रे मन !
खेल उससे खेल रे मन !

वे मयूर थिरक रहे हैं
तालसे किस नृत्यपर रे !
गतिरहित हो हरिणदम्पति
मुग्ध हैं किस कृत्य पर रे !
चिर चपल ! अब छोड़ दे चल, योगकी यह जेल रे मन !
खेल उससे खेल रे मन !

देख, हाँ, वह देख कैसा
पीतपट फहरा रहा है !
साँवरा सुन्दर सलोना
लख तुम्हें लहरा रहा है !
अब हिचक दे त्याग उससे खेल हाँ, हाँ खेल रे मन !
खेल उससे खेल रे मन !

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तितिक्षाकी शक्ति कहांसे ?

एक बार मैं और सुदर्शन सिंहजी 'चक्र' दोनों अति साधारण रीतिसे कैलास आश्रम ऋषिकेशकी एक कुटियामें रह रहे थे। रात्रिके दस बजे लघुशङ्काके लिये बाहर निकलने पर पाँवमें बिच्छू डंक मार गया। पहाड़ी बिच्छू, बड़े-बड़े, काले-काले, भयंकर और विषैले होते हैं। मैंने सोचा कि यह बात यदि साधुओंको बतला दी जायगी तो उन्हें कष्ट होगा। सुदर्शनजीको चिकित्साके लिये मना कर दिया और कह दिया कि तुम प्रेमसे सो जाओ, मैं भी सोता हूँ। मैं पद्मासन बाँधकर बैठ गया और तीन घण्टेतक स्थिर बैठे रहनेपर नींद आ गयी। चक्रजीको यह घटना याद है और उन्होंने अपने संस्मरणमें लिखी है।

परन्तु मेरे अन्दर उस बिच्छूके डंकके विषको सहनेकी शक्ति कहाँसे आयी, यह उन्हें आजतक मालूम नहीं है। बात यह थी कि उस समयसे कुछ मास पूर्व मैं और मेरे मित्र जे० सिंह—दोनों गंगातटपर एक महात्माका दर्शन करने गये। वे महात्मा अद्वैतनिष्ठा-सम्पन्न थे और खप्परवाले बाबाके नामसे प्रसिद्ध थे। पहले भी एक-दो बार हम उनका सत्संग कर चुके थे। इस बार जब हम उनके पास बैठे, तो वे कुछ अस्वाभाविक-से लगे। नेत्रोंमें लाली और वाणीमें भी लड़खड़ाहट। पूछनेपर उन्होंने बताया कि बीत जानेवाली रात्रिमें जब वे जंगलमें वृक्षके नीचे बैठकर ध्यान कर रहे थे, एक बिच्छू उनके शरीरपर चढ़ आया और नौ जगह डंक मार गया। अबतक बीस घण्टे बीत चुके थे, न तो तो उन्होंने किसीसे कहा था और न कोई चिकित्सा ही की थी। हम लोगोंने बहुत आग्रह

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किया कि कोई उपचार करें, परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। वे केवल एक लङ्गोटी पहिनते थे और रात्रिमें बिना किसी बिस्तरके धरतीपर ही सोते थे। वे थोड़े दिनोंमें स्वस्थ हो गये और हमारे गाँवके पास आकर दो-चार दिन रहे। केवल माँगकर खाते थे।

उस दिन जब मुझे कैलास आश्रममें बिच्छू डंक मार गया, मैं पद्मासन लगाकर बैठा तो उनका स्मरण हो आया और उनकी सहनशक्तिका ध्यान करनेसे मुझमें भी सहनशक्तिका संचार हो गया और तीन घंटेमें सारी पीड़ा निवृत्त होकर नींद आ गयी। यह घटना सन् १९३२-३३ की है।

तत्त्वानुभूतिके प्रसङ्गमें महाराजश्रीने श्रोताओंसे कहा—'आप लोग मेरे लिये ईश्वररूप हैं।'

एक भक्त उनके पास कुछ दिनों बाद पहुँचे। कहा—'मैं आपके लिये ईश्वर हूँ, इसलिये मुझे चढ़ाइये चन्दन-अक्षत और पहनाइये फूल-माला। लगाइये भोग और उतारिये मेरी आरती।'

महाराजश्री हँसे और बोले—'भाई मेरे, मेरा ऐसा भाव है, तो तुम्हें भी तो दूसरोंके प्रति ऐसा ही भाव बनाना चाहिये। अपनेमें ईश्वर बुद्धि मत करो। इससे तो मिथ्या अहंकार ही बढ़ेगा।'

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• प्रवचन प्रभावहीन क्यों ?

एक सज्जन बहुत अच्छे वक्ता थे; परन्तु श्रोताओंपर उनके प्रवचनका प्रभाव नहीं पड़ता था। जब अपनी उक्ति और युक्तियोंसे उनका काम नहीं बना, तब वे एक मनोविज्ञानके डाक्टरके पास गये। उनकी समस्या जानकर डाक्टरने कहा कि आप तीन-चार दिन तक अपना भाषण मुझे आध-आध घण्टे प्रति दिन सुनाइये। उन्होंने वैसा ही किया। अन्तमें डाक्टरने उन्हें समझाया—'महाशय! आप प्रवचन करते समय यह नहीं देखते कि हमारे श्रोताको क्या सुननेकी आवश्यकता है। वह क्या सुनना चाहता है और क्या समझ सकता है। आप तो बस, अपने दिल-दिमागका बोझ उतारकर फेंकते जाते हैं और अपनी काव्यचातुरी तथा गम्भीर पाण्डित्य दिखानेमें ही तन्मय हो जाते हैं। इसी कारण आपके प्रवचनका प्रभाव श्रोताओंपर नहीं पड़ता।'

*

• निष्ठा

अरे विधु तू मुझे लुभानेका करता है व्यर्थ प्रयास
नहीं जानता, मेरे उरमें दीख रहा प्रियका मृदु हास।
भले फूट जायें ये आँखें, पर न लखेंगी तेरी ओर।
देख, देख वह नृत्य कर रहा, मेरा प्यारा नन्द किशोर॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवद्भक्ति

ईश्वरने तुम्हें जो उत्तम अवसर दिया है, भोग-विलासमें आसक्त न होकर त्याग, वैराग्य संयमसे अपना भजन करनेका, उसका पूरा लाभ उठना चाहिये। यह मनुष्य जीवन बार-बार नहीं मिलता। इसमें मनुष्य साधन, सत्संग और लगनसे परमात्माको प्राप्त कर सकता है, स्त्री, पुरुष सभी। इसलिये बड़े प्रेमसे निरन्तर परमात्माके स्मरणका अभ्यास करना चाहिये।

जब तक जीवनमें ईश्वर प्रवेश नहीं करेगा, दुर्गुणोंका नाश और सद्गुणोंकी प्राप्ति नहीं हो सकती।

* * *

सर्वत्र भगवान्‌का ही दर्शन करो। आकाशको देखकर भगवान्‌के श्याम रंगका आभास हो। बादल देखकर घनश्याम, गायको देखकर गोपाल, मोरको देखकर मोर-पंख-धारी, मोर-मुकुट वाले यहाँ तक कि गधेको देखकर होलीके समय भगवान्‌के क्रीड़ा-कौतुकका स्मरण हो जाय।

* * *

भगवत्प्राप्तिके लिये यदि भक्त सांसारिक मर्यादाओंका उल्लंघन कर सकता है तो भगवान् भी सारी मर्यादाएँ तोड़कर अपने प्रेमी भक्तके पास दौड़े आते हैं। वे अपने भक्तको कदापि नहीं छोड़ सकते। यह उनके वशकी बात नहीं है।

* * *

व्याकुलता सच्ची हो तो भगवान् एक दिनमें नहीं, एक पलमें मिल जायँ।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह सर्वदा अनुभव करना कि भगवान्‌की कृपा और प्रेम तुमपर बरस रहे हैं। तुम्हें वे याद करते हैं और तुम्हारी देखभाल करते हैं, खासकर उस समय जब तुम और दूसरी बातें सोचने लगते हो; क्योंकि वे सर्वदा तुम्हारे अन्दर आशा और उत्साहकी ज्योति जलते देखना चाहते हैं। आगे बढ़ो!

* * *

द्वादशी हरिवासर है। दस इन्द्रिय, ग्यारहवें मन सहित बारहवें जीवको प्रभुको अर्पण करना।

* * *

वृत्तिका भगवद्धामाकार होना या भगवदाकार होना ही भक्ति है। या तो मनको गोकुलमें ले चलो या गोकुलको अपने मनमें ले आओ।

★

विश्वास

जब अपना मन ही ईश्वर है,
जब अपना मन ही गुरुवर है
तब बार-बार क्यों पूछ रहे,
विश्वास बिना सब पत्थर है।
जो होता है वह ईश्वरका
करुणासे पूर्ण विधान भला,
यदि अपने मनको खलता है,
तो क्या पथ पर वह ठीक चला?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● भजनका स्वरूप

जैसे अपने घर कोई अपना ही आया। अब उसकी सेवा कैसे की जाय? सेवाको ही तो भजन कहते हैं। उसे अच्छे आसनपर बैठाओ। हाथ-पैर धोओ। चन्दन-माला, खाना-पीना, आरती, सोना आदि। उससे जैसा सम्बन्ध हो उसके अनुरूप व्यवहार करो। भगवान्‌को अपना निकट-से-निकट सम्बन्धी मानकर उनसे प्रेम करो, खिलाओ-पिलाओ, सेवा करो, लड़ो-झगड़ो; क्योंकि वे तुम्हारे हैं। उनसे कोई दुराव नहीं है। लालाशाही तकल्लुफ (शिष्टाचारकी अति) न करो। मेवे हों तो ठीक, नहीं तो चने ही सही। बैठे ठाले दिन भर उन्हींसे लाड़ लड़ाया। यही भजन है। उन्हींके साथ खाओ, नहाओ, बैठो, सोओ, खेलो। वे तुम्हारे, तुम उनके। कुछ नहीं तो दो तोलेकी जीभपर उनके मीठे नामकी मिश्री घोल-घालकर रस लेते रहो। दिन-रात मुँह मीठा रहेगा।

* * *

भजनके समय आसन बीच-बीचमें बदले तो कोई हानि नहीं। तकलीफ सहकर एक आसनसे बैठनेमें कोई लाभ नहीं। मन ठीक लगना चाहिये। चलते-फिरते भी जप। बैठकर माला। ध्यानमें भगवान् बिलकुल अपने, सम्बन्ध सारे। यदि आसनका अभ्यास बढ़ाना हो तो प्रत्येक पक्षमें पाँच मिनटका बढ़ायें। छः

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महीनेमें घण्टे भरका अभ्यास हो जायगा। योगमें उतावली नहीं करनी चाहिये।

* * *

प्र.—कैसे जानें कि भगवान् हम पर प्रसन्न हैं?

उत्तर—तुम अपने ऊपर प्रसन्न हो या नहीं? असलमें तुम्हारी आत्माके रूपमें ही भगवान् हैं। तुम और वह एक हैं। तुम प्रसन्न हो तो वह प्रसन्न हैं।

* * *

भक्तिमें चार बातें आवश्यक हैं—प्रेम, विश्वास, स्मृति और सेवा। स्मृति तो सब समय निरन्तर बनी ही रहे।

* * *

श्रीकृष्णकी छविको अपने हृदयमें बसाकर, उससे प्रेम करना ही भक्ति है। 'भगवान् मेरे हैं और मुझे अवश्य मिलेंगे', मनके इस दृढ़ निश्चयको ही भक्ति कहते हैं।

* * *

भक्तिका संस्कार बड़ा प्रबल होता है। वह भक्तका पतन कभी नहीं होने देता, बल्कि उससे बचा लेता है।

* * *

संसारमें सुख-शान्तिसे रहनेके लिये 'भगवान्का आशीर्वाद मेरे साथ है', इस विश्वाससे बढ़कर कोई उपाय है ही नहीं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● ईश्वर मुझे पहचानता है

भारतका विभाजन हो जानेके बाद एक भक्त बहुत गरीब हो गये। उनकी सारी सम्पत्ति पाकिस्तानमें रह गयी। भारतमें वे जहाँ भी कोई नया व्यापार शुरू करते, कुछ ही दिनोंमें उन्हें वह बन्द कर देना पड़ता। वे सज्जन सचमुच ही बड़े भगवद्विश्वासी हैं। एक दिन चर्चा चलनेपर कहने लगे—"भगवान् सचमुच मुझे पहचानते हैं। तभी तो कोई भी जीविकोपार्जनका काम प्रारम्भ करने पर उसमें घाटा आता है, वे रोक लगा देते हैं। कहते हैं, 'क्या प्रवृत्तिमें पड़े हो, मेरा भजन करो, रोटी-दाल तो मिल ही रही है।' कितनी कृपा है प्यारेकी!" और कहते-कहते वे द्रवित हो गये, आनन्दके आँसू उनके नेत्रोंसे ढुलक पड़े।

* * *

ईश्वरप्राप्तिके प्रयत्नकी शिथिलता ही जरा (बुढ़ापा) है और उनसे सम्बन्धका टूटना ही मृत्यु है। प्रत्येक शरीरधारीमें 'मैं' के रूपमें जो स्फुरित हो रहा है, उस 'मैं' के मूलको भूल जाना ही मृत्यु है।

* * *

भगवान्‌को लेकर जो स्मरण है, वही वास्तविक स्मरण है। 'स्मरण' का 'स' ही ईश्वर है। 'स' के बिना, ईश्वरके बिना

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्मरण मरण है और स्मृति मृति अर्थात् मृत्यु। इसलिये सच्चा स्मरण करो, भगवान्‌को अपने हृदयमें लेकर।

* * *

सेवाके द्वारा स्वसुखकी कामना अथवा सेवासे मुक्त या रिटायर होनेकी इच्छा जिसे हो गयी वह भक्ति-सुखसे वंचित है। भक्तिका रहस्य न तो उसे ज्ञात ही होगा और न ही उसके हृदयमें भक्तिसुखका उदय होगा।

* * *

तुम्हारे संकल्पोंकी पूर्तिमें बाधक हैं—तुम्हारी हीन भावना, अपनी अयोग्यता, अपूर्णता तथा संसारिक पदार्थोंकी दृढ़ आसक्ति। महात्मा इन सबसे सर्वथा असंग और मुक्त होता है। उसके पास जाओ, वह तुम्हारे संकल्पोंको पूर्ण करनेकी शक्ति देगा, सामर्थ्य देगा।

* * *

रोगीको दवा देते समय चार बातें बतलायी जाती हैं—दवा, अनुपान, पथ्य सेवन और कुपथ्यका त्याग। इनका पालन करनेसे ही रोग मिटता है। इसी तरह साधकको चित्त-निरोधके लिये, उसकी एकाग्रताके लिये अभ्यास और वैराग्यरूप पथ्यका सेवन और वासनारूप कुपथ्यका त्याग करना चाहिये। नाम औषध है, श्रद्धा अनुपान है, सद्‌गुण-सदाचार पथ्य और दुर्गुण-दुराचार कुपथ्य है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मनकी एकाग्रताके लिये चार बातें अपेक्षित हैं—प्राणायाम, इन्द्रियसंयम, सत्संग और स्वाध्याय ।

* * *

तुम्हारा मार्ग अनदेखा और साजन अनमिला है । उसके लिये चलना और उसका मिलना तब तक असम्भव है, जब तक कि कोई तुम्हें उसका पता न बतला दे ।

* * *

भजनमें मन लगनेके लिये प्रयत्नशैथिल्य आवश्यक है । बैठनेके पूर्व यह संकल्प करो कि अब तो हम भगवान्‌के साथ बैठ रहे हैं । वे जब कहेंगे कि अब उठो, तो उठ जायँगे, नहीं तो बैठे रहेंगे । और यदि कहेंगे कि मेरे धाममें चले चलो तो उसके लिये भी तैयार हैं ।

* * *

भजनमें मन चंचल न हो और शरीर न हिले इसके लिये पहले पाँच मिनट तक अनन्तसमापत्ति करो । अर्थात् शेष नागकी गोदमें भगवान् विष्णु हैं और सिरपर पृथ्वी । यदि सिर हिले तो पृथ्वी हिलकर नष्ट हो जायगी, भगवान् को भी विश्राममें बाधा होगी । इसलिये वे शान्त और स्थिर हैं । शेष भगवान्‌का यही ध्यान अनन्तसमापत्ति कहलाता है । अपने हृदयमें ऐसा ध्यान करनेसे आसन अचल हो जाता है ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्तिके तीन रूप :

(१) ईश्वर उपाय और संसार फल—यह निकृष्ट भक्ति है।

(२) धर्म, जप, ध्यान अदि उपाय और ईश्वर फल—यह मध्यम भक्ति है।

(३) ईश्वर ही उपाय अर्थात् उन्हींकी शरणागति उपाय और उन्हींकी प्राप्ति फल—यह सर्वोत्तम फल है।

* * *

व्यवहारके चार सूत्र :

विनय, मर्यादा, सभ्यता और बुद्धिमत्ता। इन चारोंसे सम्पन्न ही व्यवहार कुशल है। उर्दूमें यही गुण क्रमशः अदब, क़ायदा, तहज़ीब और तमीज़ कहलाते हैं।

* * *

प्रश्न—अव्यभिचारिणी भक्तिका स्वरूप कैसा होता है?

उत्तर—जैसे पतिव्रताका एकमात्र अपने पतिसे। भक्तका सम्बन्ध केवल भगवान्‌के साथ हो, कामके साथ नहीं। भक्तियोगमें ईश्वरकी पूजा करके उसके अतिरिक्त किसी अन्य भौतिक पदार्थकी कामना ही व्यभिचार है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मनुष्यकी पहचान उसके नित्यके आहार (इन्द्रियों द्वारा), व्याहार (भाषण), विहार (भोग, रहन-सहन) और व्यवहार (बर्ताव, चाल-चलन) से होती है।

* * *

प्रश्न—कृपण कौन है ?

उत्तर—भगवान् भले ही न मिलें, पर संसार न छूटने पाये—ऐसी चेष्टा वाला।

प्रश्न—बुद्धिमान् कौन है ?

उत्तर—जो परमात्माको पानेके लिये संसार छोड़नेको उद्यत है।

★

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहाँ बैठे हो ?

श्री हरिबाबाजी महाराज वृन्दावनमें एक गृहस्थ गोस्वामीपादके यहाँ हरिकथा-श्रवणके लिये जाते थे। उनके साथ एक सेवक भी जाता था। बाबा जाते, बैठते, कथा सुनते, न इधर देखते न उधर, चुपचाप चले आते। एक दिन बाबा-सेवक-संवाद हुआ। बाबाने कहा—'कथा अत्यन्त सुन्दर, मधुर, गम्भीर, प्रेम रससे भरी ! क्या भक्तिसे भरा हृदय पाया है !'

सेवक—'महाराज कथा तो बहुत अच्छी कहते हैं; परन्तु उनकी बैठककी एक-एक खूँटी पर बीसों शाल-दुशाले टँगे हुए हैं। क्या प्रदर्शन है !'

बाबा—'मैं दो महीने से प्रतिदिन उनके घर जाता हूँ; मैंने उनकी भीत, खूँटी, शाल-दुशाले कभी नहीं देखे। तुम उनकी कथा सुनते हो या शाल-दुशाले देखते हो ?'

कहनेका अभिप्राय यह है कि अपने अन्तर्देशके निभृत प्रदेशमें कहीं समाधि लगी रहती है, कहीं भक्ति-भावकी गंगा बहती रहती है, कहीं वासनाके गन्दे पनाले बहते रहते हैं। इसका कोई महत्त्व नहीं है। महत्त्व तो इस बातका है कि तुम अपनी दृष्टि कहाँ जमाते हो और किसके साथ 'मैं' करके बैठते हो ? तुम अपनेको जिसके साथ एक कर देते हो, वही हो जाते हो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्तकी स्थिति

भक्तकी स्थिति होनी चाहिये—सबमें 'हाँ-हुजूर'। जो कुछ है ठीक है। राजाने मन्त्रीसे कहा—'बैंगन बहुत अच्छा!' मन्त्रीने कह दिया—'जी हाँ, वह तो बहुगुन है।' राजाने कहा—'बैंगन तो बुरा होता है।' मन्त्रीजी झट बोले—'जी हाँ, क्योंकि बेगुन है।' राजा बोले—तुम तो बड़े खुशामदी हो।' मन्त्रीने उत्तर दिया—'हुजूर, मैं सेवक आपका हूँ बैंगनका तो नहीं।'

इसी प्रकार सभी परिस्थितियोंमें भगवान्‌का हाथ देखनेवाला, जो कुछ सामने आये, उसमें अपने प्रभुका दर्शन करने और प्रसन्न रहनेवाला भक्त है।

* * *

किसी चोरको यह सूचना मिली कि जिस तम्बूमें वह ठहरा है, उसमें परदेके पीछे बहुत बड़ी सम्पत्ति रखी हुई है। उसे पानेके लिये वह इतना व्याकुल रहा कि रात भर सो न सका। कब लोग सोयें, बेखबर हों और परदा फाड़कर वह सम्पत्ति चुरा ले, यही चिन्ता उसे लगी रही।

तुम्हारे हृदयमें भी सम्पत्तियोंका सार परमेश्वर छिप रहा है, क्यों नहीं सारे आवरण फाड़कर वेगके साथ उससे मिल जाते?

* * *

पर-दोष-चिन्तन चित्तमें दोषोंका संस्कार डालता है। दूसरोंमें वे दोष भले न हों; अपनेमें तो आ ही जाते हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपराधीको क्षमा करना अपराधको प्रोत्साहन देना नहीं है। उससे अपनी सहिष्णुताको बल मिलता है।

* * *

कर्मका फल कर्ताको मिलता है। सेवा सेव्यके लिये नहीं, अपितु अपने निर्माणके लिये, अभिमानादि दोषोंकी निवृत्तिके लिये की जाती है। दस-बीस व्यक्तियोंकी भूख मिटाकर सन्तुष्ट हो जाना सेवा नहीं है। सेवा यह समझकर हो कि दुनियाँ तो क्षुधार्तोंसे भरी पड़ी है, मैं खिला न सका।

* * *

प्रश्न—संन्यास क्या है ?

उत्तर—सं = सम्यक् + नि = नितरां + आस = समर्पणम्। कर्मका भली भाँति और सम्पूर्ण रूपसे भगवान्‌के प्रति निक्षेप या समर्पण का नाम संन्यास है—'इदं न मम'।

* * *

प्रश्न—दीक्षा किसे कहते हैं ?

उत्तर—दीयते गुरुणा, क्षिप्यते शिष्येण। गुरुके अनुग्रह और शिष्यकी श्रद्धाका मिलन। अनुग्रह और श्रद्धाके विवाह महोत्सवका नाम ही दीक्षा है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जैसी श्रद्धा ईश्वरमें होती है वैसी ही गुरुदेवके प्रति होती है, तभी उनकी वास्तविक कृपाका आविर्भाव होता है। तभी शास्त्रोंका रहस्य समझमें आता है और तभी अद्वय तत्त्वका साक्षात्कार होता है।

यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥

* * *

'सम्प्रदाय' सम्प्रदान – सम्यक् प्रदानसे बना अत्यन्त पवित्र शब्द है। शास्त्रोक्त योग्य गुरुसे शास्त्रोक्त योग्य शिष्यको प्राप्त ज्ञान-सम्पत्तिका नाम सम्प्रदाय है।

* * *

कृपा रस है, धारा है। जलकी भाँति वह नीचेकी ओर ही चलती है। जो नम्र है, विनयी है, उसे पाता है। अभिमानी और अविनीत उससे वंचित ही रहेगा।

* * *

सूर्य प्रकाश देता है, आँख भौतिक पदार्थ देखती है। अन्तःस्थ-वासुदेव बुद्धिको प्रकाश देता है और वह निश्चयपर पहुँचती है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन रक्तबीज है और अहंकार—अभिमान महिषासुर। इनकी बलि देकर देवी—ब्रह्मविद्याको प्रसन्न किया जाता है।

* * *

भगवान् राम दशरथ अर्थात् दस इन्द्रियोंके रथपर सवार, ऐन्द्रियक सुख-भोगको नियन्त्रणमें रखनेवालेके बेटे और दशमुख रावण अर्थात् दसों इन्द्रियों द्वारा विषयभोग करनेवालेके शत्रु हैं।

ध्यानके पाँच विघ्न :

(१) लय—मनका सो जाना।

(२) विक्षेप—मनका चंचल होना।

(३) रसास्वाद—मज़ा लेना, भोक्ता होना।

(४) कषाय—रागास्पद या द्वेषास्पदका स्मरण।

(५) अप्रतिपत्ति—ध्येयके स्वरूपको ठीक-ठीक ग्रहण न कर सकना।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ध्यानके समय नेत्रकी स्थिति

(१) पुतली स्थिर हों, अपने स्थानपर। ज़ोर नहीं लगाना चाहिये। जैसे दो गुलाबके फूल रखे हों।

(२) नींद आती हो तो नेत्र खुले रखने चाहिये। इसे उपनिषद्में पूर्णा दृष्टि कहते हैं।

(३) मन चंचल होता हो तो नेत्र बन्द कर लेना चाहिये। इसका नाम है अमादृष्टि

(४) निद्रा, आलस्य और चंचलतासे रहित मन होनेपर, अर्धोन्मीलित नेत्रोंसे ध्यान करना चाहिये। नींद और चंचलता—दोनोंका प्रकोप हो, तब भी यही दृष्टि उपयोगी है। यह प्रतिपद् दृष्टि है।

(५) नेत्र खुले हों, बन्द हों या अधखुले, लक्ष्य अन्तर्देशमें ही होना चाहिये। पुतली और पलकें दोनों ही स्थिर होनी चाहिये।

शास्त्रमें कहा है कि जिसकी दृष्टि लक्ष्यके बिना, प्राण निरोधके बिना और वृत्ति आलम्बनके बिना स्थिर है, वह योगी, पूज्य एवं गुरु है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवान् भोजन पहुचाते हैं

मैं और चक्रजी दोनों ही उन दिनों कहीं-कहीं यात्रा करनेको चले जाया करते थे। पासमें कुछ थोड़े-से पैसे और सीमित सामग्री चादर, कम्बल, लोटा। एक बार इसी प्रकार हम लोग बिहारमें तपोवन नामक स्थानमें गये। बौद्ध एवं जैन युगके भग्नावशेष देखते हुए दिनभर चलते, रातको कहीं सो जाते। कहीं चना-चवेना खाते, कहीं खिचड़ी बना लेते। कई बार लोग एक गाँवमें सोने नहीं देते तो दूसरे-तीसरे गाँवमें जाना पड़ता। कभी कचहरीमें तो कभी मन्दिरमें। एक धुन थी। राजगिरिसे चले, दोपहरको बिहारशरीफ आये। अपराह्नमें चलनेपर सायंकाल कहीं भी ठहरनेको जगह न मिली। अनजान मार्ग, धानके खेतोंके मेंड़परसे चलकर रात्रिके ग्यारह बजे बिहार लाइट रेल्वेके एक स्टेशनपर पहुँचे। शरीर थककर चूर चूर हो रहा था। वहाँ न गाँव न दूकान। खाने-पीनेकी कोई विधि नहीं बैठी। रात्रिमें कोई गाड़ी आती-जाती नहीं थी। मुसाफिरखानेमें हमारे अतिरिक्त और कोई यात्री भी नहीं था। चादर, बिछायी, लेट गये। इसी बीच पन्द्रह-सोलह वर्षके दो किशोर आये। उन्होंने हमें उठाया। हम तो उनका सौन्दर्य देखकर चकित रह गये। गौरवर्ण हृष्ट-पुष्ट शरीर, भरा चेहरा, बड़े-बड़े नेत्र, मुस्कराते हुए। दुग्ध-धवल वस्त्र। उन्होंने हमारी चादरपर बैठकर पूछा—'कुछ खाया-पिया है?' हमने कहा—'नहीं, यहां क्या मिल सकता है?' उन्होंने कहा—'खोया खाओगे?' और पाव-पाव भर खोयेके दोने हम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दोनोंको देकर वे जाने लगे। हमने पूछा—'आप कौन हैं, कहाँ रहते हैं?' वे बोले—'यहींपर।' मुस्कराकर हमारी ओर देखा और चले गये।

हमें वह सुन्दर सुकुमार रूप, वह मुसकान अब भी स्मरण है। वैसा सौन्दर्य, माधुर्य, स्नेहकोमल स्वभाव धरतीपर नहीं हुआ करता। अवश्य ही हमें भोजन देनेके लिये स्वयं भगवान् श्याम-बलराम युगल किशोरके रूपमें आये थे। यह घटना सन् १९३२-३३ की है।

साधन-पथ

प्र.—भगवन्, नमस्कारका अर्थ बतलाइये!

उ.—अपने 'अहं' की त्रिविध सत्ता अर्थात् पृथक् सत्ता, ज्ञान और आनन्दको परमात्मासे मिला देना। अभिमानका न होना और नम्रताका आना—यही वास्तविक नमस्कार है।

* * *

संसारमें जो कुछ भी दृश्यमान है, उसीमें परमात्माको देखो। केलेके तनेको चीरो तो परतके सिवा वहाँ कुछ नहीं है। वह परत ही केला है। इसी प्रकार संसार भी परमात्मा है, वही विष्णु है। इसलिये जो भी सामने आये उसकी सम भावसे सेवा करो। वह परमात्माकी सेवा है—'समत्वमाराधनमच्युतस्य'।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवन्नाममें समस्त पापोंको निवृत्त करनेका सामर्थ्य है। किन्तु वही नाम जब पाप कर्ममें साधन हो तो वह पाप वज्रलेप हो जाता है।

* * *

जीवके जीवनमें चार सबसे बड़े बन्धन हैं—अज्ञान, अनैश्वर्य, अवैराग्य और अधर्म। यह बन्धन ही उसके दुःखके कारण हैं। अज्ञानको ज्ञानसे, शरणागति द्वारा अनैश्वर्यको, भक्तिसे अवैराग्यको और धर्मसे अधर्मरूप बन्धनको काटो और सुखी हो जाओ।

* * *

व्यक्ति चाहे कितनी ही समाधि लगा ले, योगमें स्थित हो जाय और चाहे कितना ही धर्मनिष्ठ हो जाय, जबतक भगवदाकारवृत्तिका उदय नहीं होता, तबतक जीवनमें सुख-शान्ति नहीं आ सकती।

* * *

धनके तीन दोष हैं—धन स्वयं, धनका अभिमान और धनकी तृष्णा। इस दोषकी औषध है दारिद्र्य। दारिद्र्यमें धन ही नहीं, तो धनका अभिमान कहांसे होगा? तृष्णा अवश्य रहती है सो सत्संगके द्वारा मिट जायगी। त्रिदोष मिटनेमें विलम्ब लगता है, परन्तु एक दोष शीघ्र ही निवृत्त होकर चैनसे रहा जा सकता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जैसे महात्मा सुखमें-दुःखमें, दिनमें-रातमें, घरमें-वनमें, राग और वैराग्यमें, मिलन और वियोग—सभी अवस्थाओंमें सम रहकर अपने स्वरूपका अनुभव करता है, वैसेही परमात्मा भी शहदमें शहदपना, नीबूमें नीबूपना और करेलेमें कटुताकी श्रेष्ठताको स्थिर रखते हुए सबको सत्ता, स्फूर्ति और प्रकाश देते हुए सम भावसे स्थित है, यह उसका स्वभाव है।

* * *

संस्कृत भाषामें भक्त शब्दका अर्थ भात है। जैसे, भात (पका हुआ चावल) सिद्ध हो जानेपर कोमल, कणरहित, स्वादिष्ट और अलग-अलग रहनेपर भी पक्वतासे भरपूर रहता है, वैसे ही भक्त भी कोमल, अभिमानरहित तथा रसमय होता है। उनकी पृथक्तामें भी भावकी परिपक्वता एकरस रहती है।

• महात्माका अनुभव

ऋषिकेशमें शताधिक आयुके एक महात्मा शरीर त्याग रहे थे। शिष्योंने उनसे अपना एकान्त अनुभव सुनानेकी प्रार्थना की। वे बोले—'यहाँसे लाहौरतककी भूमि स्वर्णसे ढक दो तो भी मेरे मनमें उसके लिये किंचित् भी लोभ न होगा; परन्तु जबतक यह शरीर श्मशानमें नहीं चला जाता, तबतक मनमें काम नहीं आयगा, इसका आश्वासन मैं नहीं दे सकता।'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वस्तुतः काम बड़ा प्रबल है । भाई-बहिन, माता-पिता आदिके अनेक छद्म रूपोंमें वह आता है। उसे पहचानना बड़ा कठिन है। उससे बचनेमें भी ही भलाई है ।

* * *

जो जितना अधिक निर्वासन होगा, उसे भगवद्भजन, भगवन्नामका उतना ही अधिक रस, आनन्द आयगा । संसारके पदार्थोंमें मन अटका रहे तो नाम-जप, कीर्तन आदिसे संसार ही मिलेगा, भगवान् नहीं । भजनका नियम यह है कि निर्वासन होकर करनेसे भगवान् मिलते हैं । वासनायुक्त भजन विलम्बसे चित्त शुद्ध करता है ।

* * *

जो धनका न भोग करे और न दान, वह तो हलवेको पलटने वाली कलछी है । ऊँटकी पीठ पर वेदोंका बोझ है वह धन; क्योंकि न कलछीको स्वाद आता है और न ऊँटको ज्ञान होता है ।

* * *

जैसे गंगाजीकी धारा अखण्डरूपसे समुद्रमें गिरती है, वैसे ही चित्तवृत्ति लय-विक्षेपके बिना परमात्माको ही विषय करे और उसीमें समाती जाय । भावका परमात्मामें उदय-विलय होना ही भक्तिकी दृढ़ता है ।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भक्तका जीवन भगवच्चिन्तन है। भय, संकट, प्रमाद, विक्षेपके समय और इनके अतिरिक्त भी भगवान्‌का नाम स्मरण आये—यही जीवन है। इसके विना मृत्यु है, दुःख है—

कह हनुमन्त बिपति प्रभु सोई, जब तव सुमिरन भजन न होई।

* * *

साधनाका मार्ग प्राइवेट है। अकेले चलनेका, अन्तरङ्ग मार्ग है। इसमें सगे-सम्बन्धी, स्वजन-परिजनको साथ लेकर नहीं चला जा सकता। ये सब तो यहीं छूट जाते हैं। संसारके सब रास्ते, सब सम्बन्ध जहाँ समाप्त हो जाते हैं, साधन-पथ वहींसे प्रारम्भ होता है।

जीव सच्चिदानन्दके मार्गसे च्युत होकर नाम-रूपके गढ़ेमें गिर गया है। मनुष्य जिस धरतीपर गिरता है उसीका सहारा लेकर उठता है। इस न्यायके अनुसार भगवान्‌के नाम-रूपका सहारा लेकर ही वह उठ सकता है।

* * *

मार्गमें चलते-चलते पाँव फिसल जाना या गिर जाना अपराध नहीं है। अपराध है फिर न उठना और आगे न बढ़ना।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चाकू मित्रके हाथमें

दो मित्र यात्रा कर रहे थे। रात्रिमें जंगलमें विश्रामके लिये रुकना पड़ा। दोनोंने बारी-बारीसे सोनेका निश्चय किया। एक जागता तो दूसरा सोता। जब एक मित्र दूसरेकी गोदमें सिर रखकर सो रहा था, एक सर्प आया उसे काटनेके लिये। बैठे हुए मित्रने उसे रोका—

'ठहरो, इसे क्यों काटते हो?'

सर्प—इसने पहले मुझे मारा था, इसलिये मैं भी इसका रक्त लूँगा।

मित्र—तुम्हें रक्त ही चाहिये है न?

'हाँ।'

'यदि तुम्हें मैं इसका रक्त दे दूँ, तो इसे छोड़ दोगे?'

'हाँ, छोड़ दूँगा।'

मित्रने चाकू निकाली और सोये हुए व्यक्तिकी गर्दनपर रखी। मित्रने आँख खोलकर एक बार देखा और पुनः सो गया। जागनेवाले मित्रने थोड़ा रक्त निकालकर सर्पको दे दिया और इस प्रकार मित्र मरनेसे बच गया।

जागनेके पश्चात् उससे बैठे हुए मित्रने पूछा—'मेरे हाथमें खुला चाकू देखकर तुम्हें भय अथवा सन्देह नहीं हुआ?' 'भय क्यों लगता'—साथी बोला—'मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरा साथी जो भी करेगा उसमें मेरा हित ही होगा।'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दुर्गुण और सद्गुण

जहाँ राष्ट्रपतिको जाना होता है वहाँ राजपुरुष पहलेसे जाकर उनके रहनेके स्थान खाने-पीने, सुख-सुविधा आदिकी व्यवस्था करते हैं। वैसे ही जिस हृदयमें दुःखको आना होता है, उसमें पहलेसे ही काम-क्रोध आदि दोष आकर दुःखके दौरे और निवासका प्रबन्ध करते हैं। दोषोंका आगमन दुःखकी पूर्व सूचना है।

* * *

जीवका जिससे विवाह होना है, वह दिव्य पुरुष है। उसके सामने जानेके लिये अपनेको सजाओ-सँवारो, साफ-सुथरे हो जाओ। कामनाओं-वासनाओंके मलको उतारो। श्रद्धा-भक्ति, साधना, जिज्ञासाके आभूषण धारण करो। दिव्य होकर उसके सम्मुख जाओ। दिव्यका ही दिव्यसे सम्बन्ध होता है।

बदरीनाथ जाते समय जोशीमठमें एक परिचित सेठके अतिथि बने। उसकी लड़कीने मोटी-मोटी पूरियाँ देखकर थाली फेंक दी और कहा—'मैं ऐसी पूरियाँ लेकर स्वामीजीके पास जाऊँगी?'

* * *

धनके लिये सेठकी पूजा, ईश्वरकी नहीं, धनकी पूजा है। स्त्रीको 'प्राणेश्वरी, हृदयेश्वरी' कहना उसके रूपकी, कामकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पूजा है। किसीके दोष भी गुण दीखना, रागवश उसे ही पूर्ण मानना ईश्वरकी नहीं, मोहकी पूजा है। अपनेको सर्वश्रेष्ठ मानकर दूसरोंको हेय समझना, तिरस्कार करना अपने अहंकी पूजा है।

* * *

• पतिकी पहचान

एक महिलाके पति मेलेमें बिछुड़ गये। स्वयंसेवक उन्हें द्वारपर ले आये और जो अपरिचित पुरुष उधरसे निकलता, पूछते—'यही हैं क्या?' श्रीमतीजी 'ना' कर देतीं। जब वे आये, मुखकी प्रसन्नता और आँखोंके इशारेने ही बता दिया—'बस, बस, यही हैं।' इसी प्रकार श्रुति भी अपरिचितके लिये 'नेति' और ब्रह्मके लिये मौनके द्वारा संकेत करती है।

* * *

आ समन्तात् हन्ति—जो सब ओरसे मारे सो आह। चाह ही आह है।

* * *

निन्दाकी परवाह न करना बहादुरी हो सकती है; परन्तु स्तुतिका मीठा ज़हर पचा लेना उससे भी बड़ी बहादुरी है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेम रसायन

सहृदय व्यक्तिकी एकमात्र पूंजी है प्रेम। प्रेम झिलमिल-झिलमिल ज्योतिसे देदीप्यमान एक श्रेष्ठ हीरा है, जो हृदयकी मंजूषामें रहता है और जिसकी जगमगाहट कभी फीकी नहीं पड़ती।

* * *

प्रेमका उदय भावी मङ्गलकी सूचना है। प्रेमकी विद्यमानता परमानन्दकी अनुभूति है। प्रेमका परिणाम—उसकी परिपक्व अवस्था परम कल्याण है।

प्रेम आनन्द देखता है प्रियतममें; परन्तु उसको खींचकर ला देता है प्रेमीमें। प्रेमसे आनन्दका उदय होता है प्रेमीमें और प्रेमी उसे पहुँचा देता है प्रियतमतक। वह एक ऐसा रसायन है, जो प्रेम और प्रियतम दोनोंको केवल आनन्दमय बना देता है।

* * *

प्रेम सुख और दुःख, संयोग और वियोग, सामीप्य और दूरी, तत्काल और देरी, संवाद और विवादकी कोई परवाह नहीं करता। यह नित्य-निरन्तर वर्द्धिष्णु आह्लाददायी चन्द्रमा है। इसमें दिन-रात्रिका भेद नहीं है। अमावास्या और पूर्णिमा भी नहीं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेममें जागकर काम करना, भविष्यके सपने सँजोना, गाढ़ी नींदमें सो जाना या ध्यानस्थ हो जाना—सब अपने प्रियतमके लिये ही होता है। वह अपने जीवनकी सभी स्थितियों, गतियों, मतियों और रतियोंको प्रियतमकी ओर मोड़ देता है।

* * *

प्रेम प्रबल परिश्रमको भी विश्राम बना देता है। कटुको मधुर और विषको अमृत बनानेकी रासायनिक शक्ति प्रेममें ही है। ज्ञान संसारका बाध करके अधिष्ठान सत्यको 'ब्रह्म' अनुभव कराता है। प्रेम संसारको दृश्यमानरूपमें ही ब्रह्म बना देता है।

* * *

प्रेम पर कालका प्रभाव नहीं पड़ता। शरीरकी वृद्धावस्थासे वह जीर्ण-शीर्ण नहीं होता। मृत्यु और प्रलयके विकराल गालमें भी अपनी स्निग्धता और माधुरी नहीं छोड़ता। उसके रसमें निरन्तर वृद्धि होती जाती है।

* * *

प्रेम एक स्नेह-सार पदार्थ है। ज्यों-ज्यों तपाया जाता है त्यों-त्यों नवनीतसे घृतके समान अपने परिपक्व और स्थायी स्वरूपको प्रकट करता है। वह संसारकी क्षुधा मिटाता है, जीवनमें तुष्टि-पुष्टिका सञ्चार करता है और दृष्टिकोणमें आमूल-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चूल रस भरकर दर्शनकी दिशा ही बदल देता है। इससे सर्वत्र प्रियतम ही प्रियतम दीखने लगता है।

* * *

प्रेम सन्तोष और तृप्तिको जला देता है। इसमें फँसकर छूटना असम्भव है। प्रेमास्पदको देखनेसे प्रारम्भ करके आत्मसात् करलेनेमें ही इसकी पूर्णता है।

डूबा प्रेमसिन्धुका कोई फिर नहीं कभी उछलते देखा।

* * *

प्रेमका अधिकारी भिखारी नहीं, दाता है। प्रेम वह अस्त्र है, जो फेंके जानेपर दूसरेका प्रेम लेकर लौटता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेम आश्चर्य है

१. प्रेमका जन्म होता है, परन्तु मृत्यु नहीं।

२. वह हृदयकी चट्टानको गलाकर प्रियतम-सिन्धुसे मिला देता है; परन्तु स्वयं कभी गलता नहीं।

३. उसमें मानकी वक्रिमा है; परन्तु चन्द्रमाके समान अपूर्णता नहीं है।

४. वह अपनी छवि-छटाकी घटासे सारे संसारको डुबो देता है; परन्तु उसमें भयकी कीचड़ पैदा नहीं होती।

५. वह दुःखमें साथ-साथ रोता है, दोषमें साथ-साथ रहकर उन्हें दूर करनेका प्रयास करता है। द्वेषको अपने आश्रयकी छाया भी नहीं छूने देता।

६. प्रेमकी सुगन्ध मादक है; प्रेमका रस प्यास और तृप्तिका मिश्रण है। प्रेमका सौन्दर्य नेत्रोंका अद्भुत चमत्कार है। प्रेमका स्पर्श लोकोत्तर तन्मयता है। प्रेमका शब्द सङ्गीतका आकर्षण है। वह नित्य-नूतन, चिर सुकुमार, अनन्त सुन्दर है, सुधाको तिरस्कृत करनेवाली माधुरी है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धरती अधरमें

उन दिनों वसिष्ठ और विश्वामित्रमें यह विवाद चल रहा था कि बड़ा कौन है? जब परस्परके विचार-विनिमयसे निर्णय न हो सका, तब दोनों धरणीधर भगवान् शेषके पास पहुँचे। उनके कलहका कारण जानकर शेष भगवान्ने कहा—'मेरे सिरपर पृथ्वीका बोझ है। आपमेंसे कोई इसे क्षणभर धारण कर लें तो मैं निर्णय दे दूँगा।'

विश्वामित्रको बड़ी त्वरा थी। उन्होंने अपने जीवनभरके सम्पूर्ण जप-तप-यज्ञ-व्रत-स्वाध्यायसे अर्जित शक्तिके द्वारा क्षणभर पृथ्वीको धारण करना चाहा; परन्तु वह डगमगाकर गिरने लगी। शेषने उन्हें रोक दिया।

वसिष्ठने अपने जीवनके थोड़े-से भागमें किये हुए सत्संगका एक अंश लगाया। उसकी शक्तिसे पृथ्वी अधरमें स्थिर हो गयी।

शेषने मुसकराकर पूछा—'महात्माओ, अब भी निर्णय देनेकी आवश्यकता है?'

कहनेका अभिप्राय यह है कि क्षणभर सत्संगकी शक्ति करोड़ों यज्ञ, तप आदिसे बढ़कर है। सत्सङ्ग शक्तियोंका खजाना है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• पतिपर विश्वास

पत्नीने पतिसे कहा—तूफानका इतना ज़ोर है। जहाज उभ-चुभ हो रहा है। सब यात्री घबड़ाकर इधर-उधर दौड़-धूप कर रहे हैं और तुम शान्तिसे बैठे हो! क्या तुम्हें डर नहीं लगता?'

पतिने आव देखा न ताव, जेबसे रिवाल्वर निकालकर पत्नीकी छातीपर निशाना लगाते हुए कहा—'क्या तुम्हें भय नहीं लगता?'

पत्नी—'जब रिवाल्वर तुम्हारे हाथमें है तब मुझे भय किस बातका?'

पति—'मैं तुम्हारा पति हूँ तुम्हें मुझपर विश्वास है। जिसके हाथमें तूफान है, वह मेरा पति है। मुझे उसपर विश्वास है। फिर डर किस बातका?'

* * *

• जीवन ही व्यर्थ है

बनारस हिन्दू युनिवर्सिटीके प्राध्यापक श्री दे महाशयका प्रतिदिन दस मिनट भगवान्‌का भजन करनेका नियम था। एक दिन कुछ प्रोफेसरोंने उनसे कहा 'ईश्वर तो है नहीं; फिर आप व्यर्थ ही क्यों दस मिनट खराब करते हैं?' दे साहब बोले—'भाई, ईश्वर न होनेपर तो मेरे दस मिनट ही खराब होंगे; परन्तु यदि वह कहीं निकल आया तो तुम लोगोंका तो सारा जीवन ही व्यर्थ हो जायगा।'

*

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

महापुरुषोंके उपदेश श्रवणसे अज्ञानकी निवृत्ति और उनकी आज्ञाका पालन करनेसे जीवन निर्माण होता है। श्री उद्धवजीने भगवान् श्रीकृष्णसे दोनों वस्तुएँ माँगी थीं।

* * *

कल्पवृक्ष सबकी कामना पूर्ण करता है। अग्नि सबकी शीत मिटाती है, तभी जब कोई उसके समीप जाय। इसी प्रकार भगवान् भी सबके मनोरथ पूर्ण करते हैं तभी जब कोई उनके सम्मुख हो।

* * *

जब तक अज्ञान है, अविद्या-निवृत्ति नहीं हुई तब तक यह शरीर खेलने योग्य नहीं है। इससे ऊपर उठो। और जब अविद्याका ध्वंस हो गया, सब कुछ परमात्मा है—ऐसा बोध हो गया, तो इसी शरीरसे जीवन्मुक्तिका आनन्द आता है। सभी क्रियाएँ आत्मक्रीड़ा हो जाती हैं। अघासुरकी मृत्युके अनन्तर उसका वह अजगर शरीर श्रीकृष्ण और उनके साथियोंका क्रीड़ा स्थान बन गया था।

* * *

प्र.—शरणागति क्या है?

उ.—अपने भविष्य और वर्तमानके मानका खण्ड-खण्ड अर्पण। अश्वमेध आदिके समान नरमेध, नहीं, नहीं, अहंमेध अर्थात् 'मैं' का अर्पण ही वास्तविक शरणागति है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लक्ष्मी जब नारायणके साथ होती हैं, तब वाहन गरुड होता है। जब वे अकेले चलती हैं, उल्लू पर सवारी करती हैं। तुम्हारे पास केवल लक्ष्मी हैं अथवा लक्ष्मी–नारायण ?'

* * *

चित्तकी शुद्धिके लिये शुद्ध भोग, शुद्ध कर्म, शुद्ध भाव और शुद्ध स्थिति अर्थात् समाधिकी शुद्धि अपेक्षित हैं, आवश्यक हैं। इसका सबसे सुगम उपाय है चिन्तनकी शुद्धि; क्योंकि चिन्तनका नाम ही चित्त है।

* * *

आधिभौतिक असुरके नाशके लिये देवताका तथा आध्यात्मिक असुर—अहंकारके नाशके लिये महात्माका अवतार होता है। अभिमानीमें विनय नहीं होता। अविनीतका सिर झुकेगा ही क्यों ?

* * *

'महात्माजी, घरमें बड़ी अशान्ति है, बड़ा दुःख है।'

'घरमें अशान्ति रहने दो, दिलमें शान्ति रखो। दुनियाँमें ऐसा कोई घर न होगा जिसमें थोड़ी बहुत अशान्ति न हो। अपना हृदय शान्त रखो, सहो तो सर्वत्र शान्ति दिखेगी। महात्मा लोग वनमें रहते हैं। वहाँ उन्हें अशान्तिकी कोई बात नहीं होती, फिर भी अपने चारों ओर आग जलाकर उसका ताप सहते हैं। तुम भी ऐसी ही भावना करो कि यह अशान्ति ही तुम्हें तपाकर दृढ़ और सहिष्णु बना रही है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राजा काहेका

राजाकी सवारी जा रही थी। मार्गके बीचमें एक साधु बैठा था। कर्मचारियोंके कहनेपर भी न उठा। राजाने कहा—'हट जाओ!'

साधु—क्यों भला?

राजा—मैं सम्राट् हूँ।

साधु—क्या विशेषता है तुममें?

राजा—चाहे जिसे अपने राज्यसे निकाल सकता हूँ।

साधु—अच्छा, तो अपने राज्यके सभी मक्खी, मच्छर, चीटी, सापोंको आज्ञा देकर निकाल दो!.....

साधु—नहीं निकाल सकते? फिर काहेके राजा?

* * *

प्रार्थना की गयी। साधु राजाके साथ महलकी ओर चले। प्रवेश द्वारपर बन्दूकधारी प्रहरी।

पूछा—'क्यों खड़ा है?'

उत्तर मिला—'रक्षाके लिये।'

साधु—यह तो कैदी है, राजा काहेका?

* * *

राजा भगवान्‌के सामने प्रार्थना कर रहा था सुख-समृद्धिके लिये। दरबारमें बैठकर कर वसूल करता, भेंट ग्रहण करता। साधुने कहा—'भिखारी है, राजा काहेका।'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• त्यागी कौन

सेठजीने महात्माको प्रणाम किया। महात्माने भी सेठजीको प्रणाम किया। सेठजीने कहा—'महाराज आप बड़े हैं, वैराग्यवान् हैं, मुझे क्यों प्रणाम करते हैं?'

महात्मा—'सेठजी आप बड़े हैं, विरक्त हैं। मैंने तो छोटेसे संसारको छोड़कर परमात्माको पकड़ा; परन्तु आपने तो छोटेसे संसारके लिये उसके बनानेवाले परमात्मा (बड़ी चीज) का त्याग किया हैं। इसलिये आप बड़े हैं। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।'

• मिथ्या अभिमान

एक सेठजी महात्माको अपनी विशाल कोठी और उद्यान स्वयं घूम-घूमकर बतला रहे थे। उसके कलाकौशल और संग्रहमें आत्मख्याति भी करते जाते थे। फिर कहा कि एशियामें इस ढंगका स्थान नहीं है। महात्माने वहीं पृथ्वीका नकशा देखा। पूछा—'क्या है?'—'पृथ्वी।' 'इसमें एशिया कहाँ है?' बतला दिया। फिर भारत, उसमें बम्बई बिन्दुके रूपमें। महात्माने पूछा—'इसमें आपकी कोठी भी है?' सेठ बोले—'नकशेमें कोठी नहीं दिखलायी जा सकती।' महात्मा बोले—'फिर आपका अभिमान व्यर्थ है।'

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● अर्पणका स्वरूप

एक धनपतिने श्रीनाथजीको दस हजार मुहरें अर्पित कीं। ढेर लगाते समय खनखनाहट हुई। महाप्रभुजीने सेठ को रोक दिया—'तुम्हारी भेंट श्रीनाथजी स्वीकार नहीं करेंगे।'

'क्यों महाराज!' सेठने पूछा।

'तुम्हारे हृदयमें विज्ञापन की वासना है। प्रेम व्यक्त करनेकी वस्तु नहीं है।

* * *

● लालसा

गोपियोंने कहा—'प्रियतम आनन्द मुकुन्द! हमारे हृदयपर हाथ रखो। हमारे सिरपर हाथ रखो। अपने कर-कमलोंकी छत्रच्छायामें ले लो।' अर्थात् हमारा प्रेम और हमारी बुद्धि ले लो। हम तुमसे ही प्रेम और तुम्हारा ही चिन्तन, अनुध्यान करें। भले ही हमें बार-बार जन्म लेना पड़े, प्रेम तुमसे और चिन्तन तुम्हारा ही हो।

* * *

श्रीरमण महर्षिसे उनके भक्तोंने अपनी मातासे बोलनेके लिये बहुत आग्रह किया। वे बोले—

'जो हो चुका, उसे मिटाया नहीं जा सकता। और जो होने वाला है, उसे टाला नहीं जा सकता।' (इसलिये बोलनेकी आवश्यकता नहीं है।) कहकर वे मौन हो गये।

★

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सार्थक जीवन

जीवनकी पूर्णताके तीन सूत्र—जीवन सदा, विचार उच्च और आनन्द निर्विषय।

* * *

जहाँ हमारे संकल्पकी पूर्ति हो, वहाँ ईश्वरका मन अपने मनके अनुकूल होता है; परन्तु जहाँ अपना संकल्प कटता है, वहाँ हमारे मनको ईश्वर अपने मनमें मिलाता है। दूसरी स्थितिमें प्रेम अधिक है।

अपने मनको गोपी बनाओ। तुम देखोगे कि मनकी सभी वृत्तियाँ गोपियाँ बनकर श्रीकृष्णका अभिसार करनेके लिये दौड़ेंगी।

* * *

संसारका समस्त सौन्दर्य एक ओर तथा मनमोहनकी मुस्कान एक ओर; किसे चुनोगे? मुस्कान सब मटियामेट कर देगी, जगत्का सौन्दर्य फीका पड़ जायगा।

* * *

मुस्कान अर्थात् आनन्द। चितवन अर्थात् ज्ञान। भगवान्में दोनों हैं। आनन्द उगलनेका नाम मुस्कराना है। श्रीकृष्णके हासमें ज्ञान और आनन्दका सम्मिश्रण है।

* * *

मनोवृत्तिका आकर्षण जबतक ईश्वरकी ओर नहीं होता, तभी तक विषय उसे अपनी ओर खींचते हैं। जब मनोवृत्ति ईश्वराभिमुख हो जाती है, विषय अपने-आप निवृत्त हो जाते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● दृष्टि ईश्वरपर

एक विद्वान् सज्जन एक महात्मासे दूसरे महात्माकी आलोचना कर रहे थे कि उन्होंने अपने ग्रन्थमें यह अशुद्धि की है, वह अशुद्धि की है, इत्यादि । महात्माने कहा—

'पण्डितजी, आप मेरी ओर देखिये और कागजपर कुछ लिखिये ।' पण्डितजीने पाँच लाइन लिखते-लिखते दस अशुद्धियाँ कर दीं । महात्माने कहा—'पण्डितजी, तुम मेरी ओर देखते हुए एक लाइनकी भी शुद्ध न लिख सके, फिर जो निरन्तर ईश्वरकी ओर देखता है, वह शुद्ध कैसे लिखेगा ?'

* * *

रेडियो वस्तुतः स्वयं नहीं बोलता और न गाता है । कहीं अन्य देश, कालमें वक्ता गाता या बोलता है और रेडियो उसे अभिव्यक्त करता है । इसी प्रकार भगवान् स्वयं ही अपनी लीला, अपने गुण, महापुरुषोंके हृदय प्रदेशमें बैठकर प्रकट करते हैं । महात्माका शरीर रेडियो है, संगीत तो ईश्वरका ही है ।

* * *

किसी स्टेशनसे गाना सुननेके लिये रेडियोकी सुई उसके मीटरपर लगानी होती है । यदि सुनाई नहीं पड़ता, तो या तो सुई ठीक स्थानपर नहीं लगी अथवा यन्त्र दोषपूर्ण है । इसी प्रकार भगवान्का चिन्तन, ध्यान यदि ठीक-ठीक करना है तो अपने हृदय-रेडियोकी सुई ठीक स्थानपर लगानी होगी ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसमेंसे अभिमान, राग-द्वेष आदि त्रुटियोंको मिटाना होगा। चित्तवृत्तिका भगवदाकार होना ही सुईका ठीक स्थानपर लगना है।

* * *

दुनियांमें क्या कोई ऐसा भी व्यक्ति है, जो तुम्हें सर्वथा दोषमुक्त दीखता हो। यदि हाँ, तो तुम्हारा बेड़ा पार है; क्योंकि तुम्हें गुरु मिल गया और कोई भी दोषमुक्त नहीं दीखता तो भी बेड़ा पार है, क्योंकि तुम्हारी कहीं भी आसक्ति नहीं है।

* * *

ज्ञानकी सुखात्मक तरंगका नाम ही प्रेम है। यही गाढ़ होकर जब स्थायिभावको प्राप्त होता है, तब रति कहलाता है। जब मन चंचलता त्यागकर अपने इष्टदेवमें ही रमे, कहींसे भी आकर वहीं ठहरे, उसी स्थिरतामें उसे शान्ति मिले। इसी स्थिरताका नाम रति है।

* * *

• मन्त्रका अर्थ

मैं वाराणसीमें एक सिद्ध सन्तके दर्शन करने गया। उन्होंने पूछा—'मन्तर (मन्त्र) का अर्थ जानते हो?'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'नहीं, महाराज ! कृपा करके बतलाइये'—हाथ जोड़कर मैंने कहा। वे बोले—'मन अन्तर मन्तर। जिससे मन अन्तर्मुख हो जाय, जिससे मन तर हो जाय सो मन्त्र।'

* * *

श्रीकृष्ण स्वयं ही रस, रस्य और रसिक हैं। बाँसुरीमें अपना हार्द रस—अमृत भरते हैं। वंशी वही अमृत गोपियोंके कर्ण-कुहरोंमें पहुँचाती है। कानोंसे हृदयमें, फिर रोम-रोममें वह व्याप्त होता है। वही अमृत गोपियोंके अधरोंमें आता है और भगवान् अपने उसी अमृतका पुनः पान करते हैं। यह अमृत संसारी नहीं, दिव्य, अलौकिक है। भगवान् तो '**आपै अमृत आप अमृत घट आपै पीवन हारी**' हैं।

* * *

प्र०—नित्य ही '**तू दयालु दीन हौं तू दानि हौं भिखारी**' कहनेसे क्या अपनेमें दैन्य और हीनभाव नहीं आ जाता ?'

उ०—यह दैन्य ईश्वरके सामने है, जगत्के सामने नहीं। जो ईश्वरके सामने दीन है, उसकी शरणमें है, संसारकी कोई भी वस्तु उसे प्रलोभन नहीं दे सकती, झुका नहीं सकती। इससे उसके प्रति दैन्य भी नहीं आ सकता।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संसारमें सम्राट् दो ही हैं :— एक वह जिसके हाथमें सब है और दूसरा वह जिसने परब्रह्म परमात्माको जानकर सम्पूर्ण नाम-रूपात्मक प्रपञ्चका बाधकर अपनेको सबसे एक कर दिया।

* * *

समाहित अर्थात् समाधानसे युक्त। चाहे कोई कुछ कहे, करे, कुछ हो जाय, अपनी निष्ठामें अडिग, अपने इष्टमें निष्ठा करके बैठ जाना।

* * *

समाहित अर्थात् समाधिस्थ। जैसे महात्माको समाधि दी जाती है, इसी प्रकार आगे-पीछेकी फिक्र छोड़कर परमात्माके चिन्तन-भजनमें बैठ जाना।

* * *

प्रश्न—कृष्ण कैसे मिलें ?

उत्तर—यह प्रश्न चौबीस घण्टोंमें तुम्हारे मनमें कितनी बार उठा ? इक्कीस हजार छः सौ श्वास चलते हैं, क्या उतने बार उठा है ? इनका सौवाँ हिस्सा भी उठे तो श्रीकृष्ण-प्राप्तिका उपाय भी मिल जाय। पहले ललक तो हो, तड़प तो हो दिलमें। मचल जाओ कृष्णके लिये। प्रश्न कृष्णका नहीं, धन, मोटर, मकान, भोग-सामग्री, स्त्री-पुत्रादिका उठता है। भूख तो इनकी है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्र.—बाहरका संघर्ष कैसे मिटे ?

उ.—अन्तरका संघर्ष तो मिटाओ। तुम्हारे भीतर जो द्वन्द्व है, उसे शान्त करो। सब कुछ उसीके कारण है।

* * *

ईश्वरके लिये सच्ची जिज्ञासा, सच्ची ललक, तड़प, व्याकुलता जाग जाय तो एक चिड़िया भी लक्ष्य प्राप्तिका उपाय बतला देगी।

* * *

कौओंको खिलाओ तो कभी तुम्हारे द्वारपर हंस भी आ जायँगे। दीनकी सेवा करो तो दीनबन्धु क्यों न पधारेंगे ?

* * *

(१) वेदको प्रमाण मानना

(१) ईश्वरको आराध्य मानना

(३) यज्ञ-यागादिको धर्म मानना

(४) मन्त्रवेत्ता, ब्राह्मण आदिको आचार्य मानना और

(५) गंगा स्नानादिको पावन मानना

—यह पाँच बातें वैदिक धर्मके प्राण हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धनके पाँच संविभाग :

(i) धर्मके लिये

(ii) यशके लिये

(iii) धन-वृद्धिके लिये

(iv) अपने लिये, और

(v) अपने कुटुम्बियोंके लिये

—यही लोक-परलोक हितकारी मार्ग है।

* * *

दुःख उस दिन नहीं आता जिस दिन धन जाता है। वह तो उसी दिन आकर जम जाता है जिस दिन हम बेईमानीके साथ उसे कमाते हैं।

* * *

भोगसे योग भी होता है और रोग भी। संयमसे करो तो योग और असंयमसे करो तो रोग।

* * *

धन बांटकर गरीब होनेवाला शोभायमान—उज्ज्वल होता है और धन खोकर गरीब होने वाला दीन-दुःखी होता है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीकृष्णके दर्शनमें बाधा डालनेवाले गोपियोंको प्रिय नहीं और गोपियोंके दर्शनमें बाधा डालनेवाले श्रीकृष्णको प्रिय नहीं। ब्रह्माजीसे श्रीकृष्णने बात तक नहीं की, क्योंकि उन्होंने श्रीकृष्णसे ग्वाल-बाल, गाय, बछड़ोंका विछोह जो करा दिया था !

* * *

जो कम भोजन करता है, उसे भोजनमें रस आता है। इसी प्रकार जो कम बोलता है, उसकी वाणीमें रस आ जाता है।

* * *

अपनी शक्तिसे अधिक जप, ध्यान, प्राणायाम आदि नहीं करना चाहिये। जितना भजन शरीर और मस्तिष्क सह सके, उतना ही करना चाहिये। हठपूर्वक अधिक करनेसे मस्तिष्कमें विकृति हो जाती है। बढ़ाना ही हो तो क्रमशः धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिये।

★

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाह गुरु ?

गुरु नानकजीने अपने शिष्यको सन्देश भेजकर बुलवाया। वह परिणीत होनेवाली कन्याका हाथ छोड़कर विवाह-मण्डपसे दौड़ा। रात्रिमें विश्रामके लिये मार्गकी एक सरायमें रुका। सामने वेश्याका गायन हो रहा था। मन विचलित हुआ। कई बार वहाँ जानेका प्रयत्न किया; परन्तु हर बार चपरासी हाथमें डण्डा लिये सामने आ खड़ा होता। शिष्य न तो रातभर सो ही सका और न वेश्याके पास ही जा सका। सबेरा हुआ और वह पुनः दौड़ा। गुरुदेवकी सेवामें उपस्थित हुआ। निवेदन किया—'प्रभो, आपसे मिलनेकी इतनी व्याकुलता बढ़ी कि सब कुछ छोड़कर आपकी आज्ञा पालनके लिये दौड़ा आया हूँ।' गुरु नानकजी बोले—'बेटा रास्तेमें तुम्हारा मन वासनाग्रस्त हो गया था, सो पहरेदारके रूपमें डण्डा दिखाकर मैंने ही बचाया था, वह क्यों नहीं कहते ?' शिष्य विह्वल हो चरणोंमें लोट गया। वाह गुरु !

* * *

जैसे शरीरके लिये खिलाने-पिलाने तथा पलंगपर सुलाने आदिकी व्यावहारिक क्रियाएँ आवश्यक हैं उसी प्रकार अपने व्यावहारिक अन्तःकरणको व्यावहारिक परमात्मासे जोड़ो तभी उसकी शुद्धि होगी। परमात्माका व्यावहारिक रूप गुरुदेव ही है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संसारमें संसारी इच्छाओंको पूर्ण करनेवाले तो बहुत हैं, पर हमारे दिलको संसारी इच्छाओंसे छुड़ानेवाले एक गुरुदेव ही हैं।

* * *

अध्यापकने ब्लैक बोर्डपर रेखा खींची। कहा—'इसे बिना मिटाये छोटा कर दो।'

स्वामी रामतीर्थ उन दिनों बालक तीर्थराम थे। उठे और उसी रेखाके ऊपर एक बड़ी रेखा खींच दी और पहली रेखा अपने-आप छोटी हो गयी।

सारी विषय—वासनाओंके ऊपर एक बड़ी वासना श्रीकृष्ण विषयक जोड़ दी। संसार-वासना अपने-आप छोटी हो जायगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेमामृत

प्रेम मान-अभिमान-सम्मान नहीं सह सकता। परिधिके भीतर रहनेवाला असीमसे नहीं मिल सकता। हनुमान हनुमान इसलिये कहलाये कि उन्होंने मानका हनन कर भगवान्‌का नित्य दास्य स्वीकार किया था।

* * *

चतुर व्यक्तिसे प्रेम नहीं किया जाता, भोलेसे प्रेम किया जाता है। चतुरसे धोखा खा जानेका डर रहता है और भोलेको तो यह सब आता ही नहीं।

* * *

प्रेम दीपक है, हृदय मन्दिर है। जब तक दीपक मन्दिरमें जलता रहता है, सुरक्षित रहता है, पर बाहर आते ही या तो डगमगाने लगता है या फिर बुझ ही जाता है। प्रेम भी ऐसा ही है। जब तक हृदयरूपी मन्दिरमें छिपा रहता है, सुरक्षित रहता है और बढ़ता भी रहता है, पर जहां यह जीभ रूपी देहलीसे बाहर निकला कि दुनियांकी नज़र लगी! अतः प्रेमको हमेशा छिपाकर ही रखना चाहिये।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ईश्वरके मार्गमें चलनेवालोंको संग्रह–भोगका त्याग, धर्मका लंघन और मोक्षका विलंघन करके अनन्यता करनी पड़ती है। तभी तो कहा है—

यह प्रेमको पंथ करारो महा तरवारकी धार पै धावनों है!

* * *

प्रेममें इतनी शक्ति होती है कि वह दोको एक कर देता है, दूरको निकट कर देता है, गुणहीनको गुणवान् बना देता है और प्रेमी और प्रियतम के बीच किसी तरहके भेदभावको नहीं रहने देता।

* * *

केवल ईश्वरकी जानकारी प्राप्त करनेसे काम नहीं बनता, प्रेम करनेसे काम बनता है।

* * *

प्रेममें बदला चुकाना अच्छा नहीं मानते और चुकाया जा भी नहीं सकता। (सेवाका बदला तो तब चुकाया जा सकता है जब प्रेमी किसी आपत्ति-विपत्तिमें पड़ जाता है—और ऐसा प्रेमी चाह कैसे सकता है?)

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Śri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोमल हृदयमें अपने प्रियतमके प्रति जो एकमात्र ममता है—वह प्रेम है।

* * *

प्रेमीका सुख, सौन्दर्य, माधुर्य व धर्म साराका सारा प्रियतमको मिल जाय, न कि प्रियतमका उसके पास आ जाय—प्रेमकी कसौटी है।

* * *

प्रेम जिससे होता है, उसके चारों ओर प्रेमीका मन उसी तरह मंडराता रहता है, जिस तरह फूलके चारों ओर भंवरे मंडराते रहते हैं। प्रेममें विस्मृतिको कोई स्थान नहीं।

* * *

प्रेम वह बिजली है जो बिना तार के ही प्रेमीके मनकी शक्तिको, मनको ले जाकर प्रियतमके सम्मुख रख देता है।

* * *

प्रेमका सबसे बड़ा गुण कहो, दोष कहो—उसमें सन्तोष नहीं—'अरबरात मिलिबेकों निशिदिन'।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुन्दरता वस्तुमें नहीं होती, प्रेममें होती है। श्रीकृष्ण मयूर-पिच्छ पसन्द करते हैं, अपने सिरपर धारण करते हैं। क्यों? क्या वह बहुत सुन्दर है? नहीं। मयूरकी बोली कर्कश, पांव लड़खड़ाते हुए और सद्भक्षी भी नहीं; पर राधारानीका सम्बन्ध जो उससे है। वे जो उसे मोर—मेरा कहती हैं, अतः श्रीकृष्ण उस मयूरपिच्छको बड़ा मान देते हैं, बड़े प्रेमसे उसे धारण करते हैं। तो प्रेम जिससे जुड़ता है, उसे सुन्दर बना देता है।

* * *

जबतक अहं भाव रहता है, अपनी शक्ति रहती है, तबतक श्रीकृष्णका आविर्भाव नहीं होता और जब प्रेमरसकी धारामें सब कुछ बह जाता है, डूब जाता है, तब अपने-आप भगवान् प्रगट हो जाते हैं।

* * *

धाम, गुणानुवाद, रूप, लीला और सेवा—यह पाँच बातें, भगवत्प्राप्तिकी एक इच्छाके उदय होनेसे, अपने-आप क्रमशः भक्तके जीवनमें आ जाती हैं।

* * *

'हृषीकेण हृषीकेशसेवनं भक्तिरुत्तमा'—भगवत्प्रीत्यर्थ अपनी इन्द्रियोंका विनियोजन ही उत्तम भक्ति है। अपनी रूप-सज्जा, अपने गानका, शब्दका प्रभुकी प्रसन्नताके लिये उपयोग, अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हाथों द्वारा उनकी सेवा, पैरों द्वारा उनतक यात्रा—अपनी प्रत्येक पवित्र कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रियका सर्वथा प्रियतम प्रभुके लिये उपयोग ही उत्तम भक्ति है।

* * *

नटराज (शङ्करभगवान्) आनन्दमें भरकर आत्मसुखके लिये नाचते हैं और नटवर (श्रीकृष्ण) आनन्दमें भरकर दूसरोंको आनन्दित करनेके लिये नाचते हैं।

* * *

श्रीकृष्ण-भक्ति फल है और सब साधन। अतः भक्ति जिस किसीसे और जब मिले ले लेनी चाहिये।

* * *

मुक्ति चाहते हो तो जीवनमें इन तीन बातोंको धारण करो—

१. जो कुछ सामने आवे, उसमें भगवान्‌की कृपाका अनुभव हो।

२. अपने कर्मका जो भी फल मिले, खुशी खुशी भोग लिया जाय।

३. अपना दिल, अपनी वाणी, अपना शरीर भगवान्‌के सामने झुका रहे, जैसे कोई मोमका पुतला हो—'**जाहि विधि राखे राम ताहि विधि रहिये**'।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पहले सेवा करो, फिर प्रेम होगा। मन अशुद्ध रहते हुए भी आचरण शुद्ध रक्खोगे, तो मन शुद्ध होनेकी सम्भावना है, अन्यथा ज़िन्दगी भर ही अशुद्ध रह जाओगे ।

* * *

मधुपति कृष्णका मधुवनमें प्रवेश तब होता है जब उसमें—

१. मानसरोवरकी-सी निर्मलता, स्वच्छता रहती है।

२. सरिताका-सा वेग रहता है।

३. पर्वतकी-सी स्थिरता, दृढ़ता रहती है।

४. वेदपाठकी-सी पवित्रता रहती है।

५. भँवरोंकी-सी आत्मविस्मृति रहती है, और

६. फूलोंकी-सी प्रफुल्लता रहती है।

प्रीति मधु है और हृदय मधुवन।

(वेणुगीतान्तर्गत 'कुसुमित वनराजि०' श्लोकका व्याख्यासार)

* * *

यदि तुम्हारे मनमें कोई इच्छा ही नहीं है तब तो बहुत अच्छा; पर यदि कोई इच्छा है तो उसकी पूर्ति भगवान्‌से करो। भगवान्‌से ही मांग लो। उनसे कैसा संकोच? स्त्रीको कुछ आवश्यकता होती है तो वह अपने पतिसे ही तो मांगती है, पड़ोसीसे नहीं। भगवान् हमारे परमपति हैं, हमारे हैं। हमें कुछ चाहिये तो उनसे ही मांगना चाहिये।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो भगवान्‌का स्मरण करता है, भगवान् केवल उसका स्मरण ही नहीं करते, बल्कि अपना दिल, अपनी आत्मा—सब कुछ दे डालते हैं।

* * *

यदि तुम्हें कृष्ण-प्राप्तिकी चाह है तो मन-ही-मन उनसे बातचीत करो और अपने हृदयके भावका गान करो। और यदि तुम्हें संसार प्यारा हो तो भूलकर भी उनकी ओर मत देखो, अन्यथा किसी कामके नहीं रहोगे।

* * *

अपने स्थूल शरीरकी ओरसे अपनी चित्तवृत्तिको बिल्कुल हटाकर ध्यान करो—संसार तुम्हारे मनमें आ ही नहीं सकता।

* * *

द्रौपदीको जबतक अपना भरोसा था, भगवान् नहीं मिले और जब उसने अपना भरोसा छोड़कर, सच्चे हृदयसे भगवान्‌को पुकारा, तो भगवान् उसी क्षण उसकी रक्षाको वस्त्ररूपमें आ गये। बस, पुकार सच्ची हो।

* * *

भगवान्‌का दुश्मन कौन ?—अभिमानी।
भगवान्‌का प्यारा कौन ?—निरभिमानी !

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्ञान कणिका

बुद्धिका स्वभाव है सत्यका पक्षपात करना। मनुष्यकी मलिन वासनाएँ उसे कुपथपर ले जाती हैं। शास्त्र बुद्धिकी शुद्धिके लिये वासना-शुद्धिपर ज़ोर देते हैं। वे कहते हैं—जितने भी नाम-रूपात्मक पदार्थ हैं, यों तो सब ब्रह्म है; परन्तु मलिन संस्कार और वासनाओंके परिवर्तनके लिये एक नाम-रूपका आधार लेकर संसारके अन्य नाम-रूपोंको छोड़ दे। वासनाकी शुद्धि भगवत्प्राप्तिकी परम मंगलमयी इच्छासे होगी और वह होगी भगवद्गुणानुवाद श्रवणसे।

* * *

शरीरसे अकेला, मनसे अकेला और ज्ञानसे अकेला ही सच्चा कैवल्य है।

* * *

जिसके हृदयमें आनन्दका विकास नहीं होता, उसको संसारसे वैराग्य नहीं होता। और जहाँ इस आन्तर रसकी प्राप्ति हुई कि संसार छूटा।

* * *

जहाँ इष्टभेद होता है, वहाँ मतभेद होता है और जहाँ इष्टभेद नहीं होता, वहाँ मतभेद भी नहीं होता।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संसारके समस्त दृश्य प्रपञ्च तथा भावोंमें सबसे अधिक सारहीन पदार्थ सम्बन्धका भाव है। रुपया भले रहे, स्त्री भले रहे; किन्तु इनके साथ जो 'मेरा' पनका सम्बन्ध है, वह तो विचार करनेपर सर्वथा सारहीन है। इस सम्बन्धको पहिले काटना चाहिये।

* * *

बन्धन काटनेकी रीति ही यह है कि पहिले स्थूल बन्धन काटे जायँ और फिर क्रमशः सूक्ष्मकी ओर बढ़ा जाय। पहिले विषय-वस्तुओंमेंसे सम्बन्ध—मेरापन दूर किया जाय। यह विवेकसे होता है। जो लोग पहिले अविद्या दूर करने चलते हैं, उनकी स्थिति विचित्र बन जाती है। ऐसे साधु जूता तो सीं लेंगे, पर भगवान्‌की पूजा नहीं करेंगे। आसक्ति गयी नहीं, राग-द्वेष बना है, मैं—मेरापन छूटा नहीं तो, केवल वाचिक ज्ञानका घोष करनेसे तो दुःख ही बढ़ता है।

* * *

भगवदर्पित कर्मसे सालोक्य, सारूप्य, सामीप्य, ये तीन प्रकारकी मुक्ति प्राप्ति होती हैं। ज्ञानमिश्रा भक्तिसे सायुज्य मोक्ष मिलता है। कर्म-ज्ञान-निरपेक्ष प्रेमसे भगवत्सेवाकी प्राप्ति होती है और अमिश्र शुद्ध ज्ञानसे कैवल्यकी सिद्धि होती है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गौएँ अनेक रंगोंकी—लाल, सफेद, काली, धौरी, चितकबरी आदि होती हैं; किन्तु उन सबका दूध एक जैसा ही होता है। इसी प्रकार इन्द्रियाँ भिन्न-भिन्न हैं। ये गौ हैं। इनका दूध—इनसे होनेवाला ज्ञान एक है।

* * *

इन्द्रियोंके द्वारा विषयका प्रत्यक्ष होनेसे ही कोई संस्कार चित्तमें नहीं बनता। हायसे हम बहुत कुछ छूते हैं, नेत्रसे तारोंको देखते हैं, कान पता नहीं कितने शब्द सुनते हैं। इनका कोई संस्कार चित्तपर नहीं पड़ता। इन्द्रियजन्य ज्ञानमें बुद्धि जब हेय-उपादेयकी भावनासे जुड़ती है तब उससे संस्कार उत्पन्न होता है।

* * *

जो लोग दूसरोंको सुनानेके लिये अध्यात्मशास्त्रका अध्ययन करते हैं, उनके हृदयमें अध्यात्मशास्त्रका रहस्य प्रगट नहीं होता। वह उन्हींके हृदयमें प्रगट होता है, जो अपने लिये उसका अध्ययन करते हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुनानेका सुख राजस सुख है। दूसरोंने बड़े प्रेमसे सुना, श्रोताओंको खूब आनन्द आया। लोग खूब तन्मय हो सुनते रहे। बड़ी प्रशंसा हुई। इस प्रकार वक्तामें जो आनन्द आया, वह राजस सुख है। इससे उसका अहंकार बढ़ा। सात्त्विक आनन्द एकान्तमें अपने अन्तरके भावसे आता है।

* * *

साक्षात् पश्यति इति साक्षी, अर्थात् जो साक्षात् देखता है, उसे साक्षी कहते हैं। इन्द्रियादि प्रमाणोंके द्वारा जो देखता है, वह प्रमाता है। इन्द्रियादि प्रमाणोंके बिना देखनेवाला साक्षी है। इसी प्रकार इन्द्रियोंको और वृत्तियोंको भी वह साक्षात् देखता है।

* * *

आनन्द, ज्ञान और अस्तित्व—ये आत्माके स्वरूप हैं और दुःख, अज्ञान तथा मृत्यु अनात्माके। जैसे जलते दीपककी लौ अग्निका स्वरूप है और धुआँ बत्तीका है।

* * *

संसारमें कोई भी घटना दुःखका कारण नहीं है। वैराग्यकी न्यूनता ही दुःखकी जननी है। उसकी निवृत्तिका उपाय है—दुःखका चिन्तन न करना—

'भैषज्यमेतद्दुःखस्य यदेतन्नानुचिन्तयेत्।'

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर्ता, कर्म और करण तथा भोक्ता, भोगका साधन और फल-भोग—यह छः बातें जीव अज्ञानसे अपनेमें आरोपित करता है।

* * *

जो कानको दबा दे, वही आँख वास्तविक है। सुने हुए से देखा हुआ प्रामाणिक होता है।

* * *

ईश्वर सबसे बड़ा नास्तिक है; क्योंकि उसका ईश्वर कोई नहीं। यदि उसका भी कोई ईश्वर हो तो उसका ईश्वरत्व नहीं रहता।

* * *

मैं हूँ, यह तो सब जानते हैं। मैं द्रष्टा साक्षी हूँ, यह कोई-कोई जानते हैं। मैं ही अपना प्रिय हूँ, यह भी समय-समयपर भान हो जाता है; परन्तु यह सब वेदान्त ज्ञान नहीं है। जो ज्ञान इन्द्रियोंसे, अनुमानसे या बुद्धिसे हो सकता है, उसके प्रतिपादनमें वेदकी सार्थकता नहीं है। वेदका वेदत्व प्रमाणान्तरसे अज्ञात और अबाधित तत्त्वके निरूपणमें ही है। आत्मा और ब्रह्मकी स्वतःसिद्ध एकताको जानकर अविद्याको मिटा देना वेदान्त है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जहाँ अपना भाग अलग और ईश्वरका भाग अलग, वहाँ भक्ति नहीं है। सब ईश्वरका भाग मान लेना ही भक्ति है।

* * *

सत्पुरुषको चाहिये कि वह सामनेवाले व्यक्तिकी वह बात स्वीकार कर ले, जिसे स्वीकार करनेमें अपने धर्मकी हानि न होती हो। लोभ, कष्टका भय अथवा अहंकारके कारण ही सामान्य जन दूसरोंकी बात नहीं मानना चाहते; किन्तु सत्पुरुषमें ये दुर्बलताएँ नहीं होतीं।

* * *

अधर्मका—पापका कोई काम न किया जाय और वृत्तिको निर्विशेष ज्ञानमें स्थापित किया जाय—साधकके लिये इतना ही पर्याप्त है। फिर मनके निरोध अथवा शुद्धिके लिये और कोई प्रयत्न आवश्यक नहीं है।

* * *

इच्छा या कामना उठनेमात्रसे तत्त्वज्ञका ज्ञान नष्ट हो गया, ऐसा मानना अज्ञान है। मनमें भय या लोभ आ गया तो इससे ज्ञान नष्ट हो गया, ऐसी धारणा अविवेकी करते हैं। जैसे शरीरमें रोग आते हैं, मनमें भी आते-जाते हैं। उससे तत्त्वज्ञके ज्ञानमें कोई अन्तर नहीं आता; क्योंकि उसकी प्रदीप्त ज्ञानाग्निसे उसके शरीर, मन, विकार और उनका कारण अज्ञान भी—सब भस्म हो जाते हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भजन-सत्संगका फल यह नहीं है कि व्यापारमें घाटा न हो, स्वजन-सम्बन्धी न मरें, मुकदमेमें हारें नहीं अथवा अयश-अपमान न हो और रोग न आवें। ये सब तो प्रारब्धके अनुसार आवेंगे ही। भजन-सत्संगका फल यह है कि इन विपरीत स्थितियोंके आनेपर भी चित्तमें विक्षेप न हो और अन्तरमें धैर्य, शान्ति बनी रहे।

* * *

हमारी सबसे बड़ी सिद्धि यह है कि जो कुछ भी होता है, उस सबको 'ओम्' कहते (स्वीकृति देते) चलें। संन्यासीका मन्त्र ही है 'ओम्'।

* * *

काम, क्रोध, लोभ, मोहादि वासनाएँ—कामनायें परमात्माने ही बनायी हैं, शैतानने नहीं। हमारे यहाँ एक ही निर्माता है, परमात्मा। उसकी बनाई ये वासनायें व्यर्थ नहीं हैं। सबकी कामनाओंका उपयोग परमात्माकी प्राप्तिमें है। सब उसीके लिये हों।

* * *

ध्यान किया नहीं जाता, स्वतः होता है। जिसके प्रति तुम्हारा सबसे अधिक मोह है, जिसे तुम सबसे अधिक चाहते हो, उसका ध्यान होता है। यदि तुम्हारा ईश्वरसे मोह नहीं है,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम उसको नहीं चाहते तो तुम ईश्वरका ध्यान भी नहीं कर सकते। बिना साधनके, बिना अभ्यासके जो वासनाहीन बनते हैं, उनसे ध्यान, भजन, चिन्तन कुछ नहीं होता और उनकी निर्वासनता भी कच्ची ही है।

* * *

सब वासनाओंमें जो सर्वोत्तम हो उसे पहले सबसे प्रबल करो। उसके प्रबल होनेसे दूसरी वासनाएँ दब जायँगी। फिर उस प्रबल वासनाको भगवान्‌में लगादो। भगवान्‌का चिन्तन-ध्यान जब होने लगेगा, तब लौकिक वासनाओंकी निवृत्ति हो जायगी। यही सच्ची निर्वासनता है।

* * *

सकाम व्यक्तिकी पकड़ दृढ़ होती है और निष्काम व्यक्तिकी ढीली। अतः भगवान्‌के चिन्तनमें सकामता अधिक उपयोगी है। भगवच्चिन्तन जब बढ़ेगा, तब अपने-आप कामनाएँ मिट जायँगी।

* * *

भगवान्‌का चिन्तन अपनी वासनाके अनुरूप करो। क्रोधी व्यक्तिको प्रलयङ्कर महारुद्रका और कामीको परमसुन्दर त्रिभुवन मोहन-रूपका चिन्तन करना चाहिये। आचारनिष्ठ धर्मात्मा मर्यादापुरुषोत्तमका चिन्तन करे तो उसका मन ठीक लगेगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● सद्गुण सबमें है

यह अपना अहंकार ही है कि हम कहीं किसीमें दोष देखते हैं। इसी प्रकार गुण देखना भी अहंकार ही है। किसीके भी गुणका क्या भरोसा? क्या पता है कि किसमें कब वासना जाग पड़ेगी? और जब सबमें सर्वत्र ईश्वर है तो किसीमें भी सद्गुण कभी भी व्यक्त हो सकते हैं।

एक सज्जन नदीके किनारे-किनारे कहीं जा रहे थे। उन्होंने देखा—कगारकी आड़में बैठकर दो स्त्री-पुरुष सुरापान कर रहे हैं और वासनासे सनी गन्दी चेष्टाएँ। वे सोचने लगे—'ये कितने घृणित हैं, नीच हैं। मैं तो इनसे सौ गुना अच्छा हूँ।' इतने ही में क्या देखते हैं कि सामने ही नदीमें एक नाव उलट गयी। नदीकी वेगवती धारामें बहुतसे स्त्री-पुरुष उभ-चुभ गोते खाने लगे। 'बचाओ-बचाओ' के चीत्कारसे वातावरण मुखरित हो गया। शराबी बोतल फेंककर, स्त्रीको एक ओर हटाकर नदीमें कूद पड़ा और डूबते लोगोंको पकड़-पकड़कर किनारे पहुँचाने लगा। वह स्त्री भी उसकी सहायतामें लग गयी। शराबीने तटपर खड़े किंकर्तव्यविमूढ़ सज्जनसे कहा—'हम घृणित हैं, नीच हैं, ठीक है; परन्तु हमारा यह काम तो ठीक है न? आइये, आप भी हमारे साथ डूबते लोगोंको बचाइये।' वे सज्जन भी जुट गये। उन्होंने अपने मनमें निश्चय किया कि किसीकी कोई क्रिया देखकर हमेशाके यह लिये निश्चय कर बैठना कि यह नीच है, एक गलत निश्चय है। सबके अन्दर सत्यं शिवं सुन्दरं छिपा है। पता नहीं, कब प्रकट हो जाय।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आसन-प्राणायाम-धारणा-ध्यानादि योगके साधनोंके द्वारा चित्तके चाञ्चल्यकी निवृत्ति होती है; किन्तु राग-द्वेषकी निवृत्ति नहीं होती। राग-द्वेषकी वासना ध्यानके समय भी बीज रूपमें चित्तमें बनी रहती है और ध्यानसे उठने पर जाग जाती है। राग-द्वेषकी निवृत्ति भक्तिसे होती है। भक्तिमें वैराग्य स्वयं निहित है, क्योंकि भगवान्‌से राग हो तो संसारके विषयोंसे वैराग्य अपने-आप हो जायगा।

* * *

जीवका पुनर्जन्म या उसे स्वर्ग-नरकादिकी प्राप्ति क्यों होती है? कर्म-संस्कारके कारण। कर्म-संस्कार क्यों होते हैं? वासनाके कारण। वासना क्यों होती है? लौकिक विषयोंमें राग-द्वेष क्यों होते हैं? देहात्मबुद्धिके कारण। देहात्मबुद्धि क्यों है? अविद्याके कारण—अपने ब्रह्मस्वरूपको न जाननेसे। अतः पुनर्जन्मकी निवृत्ति ब्रह्मात्मैक्य ज्ञानसे अविद्या-निवृत्ति होनेपर हो जाती है।

* * *

ज्ञान तो हो, किन्तु वह ज्ञेय पदार्थोंसे न लिया जा रहा हो और ज्ञाता होनेका अभिमान न हो। आनन्द तो हो, परन्तु विषयोंसे न लिया जा रहा हो अर्थात् भोग न हो और भोक्ता होनेका अभिमान न हो—ऐसी अवस्थाका नाम ही ध्यान है। इस अवस्थामें जो ज्ञान और आनन्द है, वह ईश्वरका स्वरूप ही है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैंने कहीं पढ़ा है कि जिस सभामें अपनेसे बड़े अधिक हों, वहाँ उपदेश नहीं देना चाहिये । बड़े लोग सुनते जाते हैं और सोचते भी हैं कि 'यह छोटे मुँह बड़ी बात कह रहा है ।'

* * *

यह मनुष्य शरीर पुष्प है । माताके गर्भमें पुष्पके भीतर यह पुष्प बना, जैसे मोगरा आदि कई पुष्पोंमें एकके भीतर एक पुष्प होते हैं । उत्पन्न हुआ तो नाल लगा था । पीछे नालसे पृथक् हो गया । इसका हृदय भी कमल ही है । यह ईश्वरका पुष्प खिला रहे, तभी ईश्वरपर चढ़ सकता है । यदि यह मुरझा गया तो फिर मिट्टीमें मिलेगा और पता नहीं फिर कब इसे पुष्प बननेका अवसर प्राप्त होगा । इसलिये सदैव हर्षोत्फुल्ल रहना चाहिये ।

* * *

दुःख, अज्ञान, बुराई और आत्महत्याके लिये युक्ति नहीं ढूंढ़ना चाहिये । इनके निवारणके लिये युक्ति ढूंढ़ना चाहिये ।

* * *

मरना-मारना, दुःखी होना-दूसरेको दुःख देना, स्वयं मूर्ख बनना-दूसरेको मूर्ख बनाना, ये छः शैतानके बच्चे हैं । इन्हें अपने घरमें बसाना उचित नहीं है । जो अपना घर छोड़कर पराये घर (संसार) में जाता है, उसे ही ये पकड़ते हैं ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुखकी कुंजी

एक सच्ची घटना है । एक विद्वान् लेखकको कहींसे पाँच सौ रुपये मिले । उन्होंने अपनी पत्नीको दे दिये । पत्नीको उसकी पड़ोसिनने समझाया 'तुम्हारे पति उड़ा देनेवाले हैं । घरमें रुपया रहेगा तो वे उड़ा डालेंगे । अतः रुपया मेरे पास रख दो ।'

उस भोली स्त्रीने रुपया पड़ोसिनके पास रख दिया । उन सज्जनको कुछ दिनों बाद रुपयोंकी आवश्यकता हुई । पत्नीसे माँगे तो उसने पहिले टाल दिया; किन्तु जब उसे समझाया गया कि रुपया ऐसे काममें लगाना है, जिसमें लाभ होना निश्चित है, तब वह पड़ोसिनसे मांगने गयी । पड़ोसिनने पहिले तो समझाना चाहा कि रुपया पतिको मत दो; किन्तु जब स्त्री नहीं मानी, तब कह दिया कि मुझसे वे खर्च होगये ।

इसका तात्पर्य यह है कि अपना सुख यदि तुम दूसरेके घर रखोगे—संसारके वस्तु, व्यक्तिमें तुम्हारा सुख होगा, तो वहाँसे उड़ा दिया जायगा । सुखी तुम तभी रहोगे, जब तुम्हारा सुख तुम्हारे पास रहे ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुख

संसार सुख चार प्रकारके हैं—विषय सुख, अभिमान सुख, मनोरथ सुख और अभ्यास सुख।

यह सब सुख तीन-तीन प्रकारके हैं—लोकसुख, परलोक सुख और दिव्य सुख।

इनकी उपलब्धिके लिये शरीर, विषय, करण, भाव और जीवत्वकी अपेक्षा है। व्यष्टिके लिये समष्टिका अनुग्रह अनिवार्य है। यही कारण है कि ये सब परतन्त्र हैं।

जीव सुख जन्य है, इसलिये अनित्य है। ब्रह्म सुख सहज है, स्वतन्त्र है, निरपेक्ष है। इसलिये वह संसार सुखसे सर्वथा विलक्षण है।

संसार सुख परिणाम, ताप, संस्कारकृत दुःख और गुणवृत्ति-विरोधसे ग्रस्त है। ब्रह्म सुख निरामय।

ब्रह्मसुखमें पाँच बातें नहीं हैं—कारण, कार्य, द्वैत, विरोधी तथा अवान्तर भेद।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धन कमाने, भोग भोगने, कामना करने तथा अभ्यास करनेके लिये धर्मका बन्धन अनिवार्य है। इसके विना अनियन्त्रित संग्रह, भोग, मनोरथ और अभ्यास गड्ढेमें गिरा देंगे। धर्म देह और बुद्धि दोनोंको संस्कृत करता है—(i) वासनाओंको मर्यादामें लाना तथा (ii) देहके अतिरिक्त आत्मा है, यह दर्शन देना।

* * *

'मेरा' कटे बिना 'मैं' नहीं कट सकता। जिसका 'मेरा' मिट गया, उसका 'मैं' भी नहीं रहा। वह संन्यासी है। 'मैं' के पेटमें कुछ डालोगे, तो तुम्हीं उसपर चढ़ जाओगे। 'मेरी घड़ी, मेरी पुस्तक, मेरा शरीर'—इन सबके अभमानी हो जाओगे, परिच्छिन्नतामें आबद्ध। धर्म अर्थात् पाप, दोष—दुःखसे निवृत्ति और आत्मदृष्टि।

* * *

हीरा हीरेको काटता है, इसी प्रकार कल्पनासे कल्पना कटती है। बुरे संकल्प दूर करनेके लिये सत्सङ्कल्प करो। धर्मसे कर्मकी शुद्धि, उपासनासे वासनाओंका शोधन, योगसे चाञ्चल्यकी निवृत्ति, सांख्यसे आत्मानात्म-विवेक और वेदान्तसे अविद्यानिवृत्तिपूर्वक प्रत्यक् चैतन्याभिन्न अद्वय स्वरूपका बोध।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मन तुम्हारा सेवक है। उसे शुभ कर्मोंकी ओर प्रेरित करो। नौकरसे अनुचित कार्य कराओगे तो वह तुमपर हावी हो जायगा। तुम्हारी अधीनता नहीं मानेगा। इसी प्रकार मनसे गलत काम किये नहीं कि फिर तुम भी उसके हाथ अर्पित हुए, उसके पराधीन हुए। सावधान!

* * *

मनसे काम लेना बन्द कर दो, जैसे मजदूरोंसे काम न लेनेके लिये मिलकी तालाबन्दी की जाती है, यह योग हो गया। और मनसे मिल सकने वाली सभी चीजें, ठुकरा दो। बस, मनका सारा व्यापार ठप्प हो गया—यह हो गयी समाधि।

* * *

जब तक मनसे मिल सकने वाले सुखकी वासना है, तभी तक दुःख है। जहाँ उस सुखका त्याग किया कि दुःख मिट गया। समाधि लग गयी, मनोराज्य मिट गया। निर्विकल्पता आ गयी। यही मनका वशीकार है। यह मन्त्र है।

* * *

एक महात्माकी एक आँख खराब हो गयी—बड़े दुःखी हुए कि देखनेमें भी कष्ट और लोग भी काना कहेंगे। दूसरे महात्मा आये। वे अन्धे थे, बड़े प्रसन्नचित्त। पूछने पर कहा—'पहले तो दुनियां दीखती थी, वासनाएँ बढ़ती थीं। अब संसार दीखना

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बन्द हो गया। पहले तो ध्यान करनेके लिये आँख बन्द करनी पड़ती थी। अब सहज ही बन्द हैं, करो दिन-रात ध्यान! है न बड़ा मज़ा?'

* * *

घर अपना होनेपर भी, उसमें जैसे पैरोंकी ग़न्दगी मिटाकर, साफ़ सुथरे होकर प्रवेश करते हैं, उसी प्रकार अपने आत्माको जाननेके लिये, इस घरमें घुसनेके लिये चरित्रकी शुद्धि, मनकी पवित्रता और गुरु, शास्त्र और ईश्वरकी कृपा प्राप्त करनी पड़ती है, षट्सम्पत्तिसम्पन्न होना पड़ता है।

* * *

जब तक शास्त्रकी एक भी बात तुम्हें गलत मालूम पड़ती है, तुम्हारा अनुभव अपूर्ण है। वृत्तियोंको बहिर्मुख करनेवाला, भोगमें प्रवृत्त करनेवाला ज्ञान ज्ञान नहीं है। गुरुदेवके तथा तुम्हारे अनुभवके ऐक्यका नाम ही ज्ञान है। अनुभवकी पूर्णता गुरु, शास्त्र तथा ईश्वरके अनुभवके ऐक्यमें है।

*

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● स्वरूप को जानो

पाप करो अथवा आत्महत्या, दण्ड तो मिलेगा ही। सरकार शायद फांसी न भी दे; किन्तु पापसे कैसे छूटोगे? सूक्ष्म उपाधियोंके संस्कार जो तुम्हारे साथ हैं सदा-सदासे! परमात्माकी प्राप्ति बिना आवागमनका चक्र चलता रहेगा संस्कार, कर्म, भोगके अनुसार।

पुनर्जन्म नहीं माननेसे भी काम नहीं चलेगा। ऐसा कोई धर्म, मज़हब नहीं जो मृत्युके अनन्तर जीवात्माका अस्तित्व न मानता हो। जन्मसे पूर्व जीवका अस्तित्व न मानें ऐसे पन्थ तो हैं, मरनेके पश्चात् भी जीव रहता है--यह सब मानते हैं।

जीवका पुनर्जन्म न होता तो वेदान्तका अध्ययन व्यर्थ था। क्योंकि इसी जन्म-मृत्युके बन्धनसे मुक्त करनेके लिये ही तो वेदान्तकी आवश्यकता है। व्यक्तिगत जीवन भोग, उपासना कर्मकाण्ड आदिसे भी सुधरेगा! परन्तु हमेशा-हमेशाका बन्धन छुड़ायेगा वेदान्त—ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः।

अतः जीवके रूपपर विचार करके स्वरूपको जानो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• चित्रशालाकी महिमा

१. यह संसार एक चित्रशाला है, आर्ट गैलरी।

२. अनेक प्रकारके चित्र हैं इसमें—शान्त, करुण, अद्भुत वीर, शृङ्गाररस प्रधान।

३. चित्र बड़े सुन्दर हैं; परन्तु नाम और रूपके अतिरिक्त कुछ नहीं।

४. चित्र-भेदके अनुसार मनमें भिन्न-भिन्न भाव और रसका उद्दीपन भी होता है, फलतः हम उन्हें देखकर सुखी या दुःखी होते हैं।

५. चित्रशालाके चित्रोंका स्पर्श वर्जित है; हम छूना चाहें तो भले छू लें; परन्तु नाम-रूपके सिवा वहाँ कुछ है नहीं। उन्हें छूनेपर मनकी शान्त, करुण आदि स्थितियाँ होकर हम विषाद या आनन्दमें भर सकते हैं।

६. चित्रशालासे बाहर आनेपर, चित्रके सौन्दर्यपर उसके कलाकौशलपर उसके निर्मातापर दृष्टि जाती है, उसकी हम प्रशंसा करते हैं। वस्तुतः आनन्द चित्रमें नहीं, उसके कला-कौशलसे हुआ और यह कौशल उसके चितेरेका है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

७. 'इस सृष्टिका चितेरा—चित्रकार–कारीगर परमात्मा है। उसके द्वारा सृष्ट हम प्रत्येक रसका उसकी पूर्णताका अनुभव करते हैं, और उसकी प्रशंसा करते हैं, करनी ही चाहिये।

८. वह चित्रकारमें ही हूँ, परमानन्दका समुद्र।

९. चित्र भी मैं ही हूँ, चित्रकार भी मैं ही हूँ और उसके भिन्न-भिन्न रस (शान्त आदि) भी मैं ही हूँ। रस, रस्य और रसिक भी मैं ही हूँ। अन्यकी सत्ता ही नहीं है। तब त्रिपुटी मिट गयी, समाधि लग गयी। वस्तुतः समाधि भी आत्माका विलास मात्र है। अपने अतिरिक्त कोई चीज़ न थी, न है और न कल्पना की जा सकती है। सच्चिदानन्द घन।

*

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• भेद कहां

मैं उनके लिये रो रहा था, उनकी प्यारी-प्यारी स्मृतिमें अपनेको खोकर। वे आये मन्द-मन्द मुस्कराते हुए। हृदयकी भेंट उनके सामने रखते हुए मैंने कहा—'मैं तुम्हारे लिये।'

वे बोले—'और मैं, मैं तुम्हारे लिये!'

दोनोंने एक-से ही शब्दोंका प्रयोग किया। तब क्या अर्थमें भेद है? ऐसा कैसे सम्भव है? मेरे शब्दोंकी गम्भीरतामें भेद सम्भव है—उनकी सत्यता तो असन्दिग्ध है।

ऐसी अवस्थामें शेष और शेषीका, भोक्ता और भोग्यका विभाजन कितना निराधार होगा?

इसका अर्थ यह हुआ कि तुम्हारा 'मैं' और मेरा 'मैं'—ऐसा कुछ अलगाव नहीं है। दोनोंका 'मैं' एक ही है। तुम्हारे लिये 'मैं' और मेरे लिये 'तुम' यह दोनों विकल्प मात्र हैं—अर्थशून्य वाग्व्यवहार मात्र।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुख सभीको इष्ट है। ऐसा सुख जो अविनाशी है, सर्वत्र है, सर्वदा है तथा जिसके लिये किसी अन्यकी अपेक्षा नहीं है, जो पराधीन नहीं है। तब वह सुख अपनेमें ही है। मैं ही सुखरूप हूँ। यही सुख जो अविनाशी, सर्वव्यापक, स्वतन्त्र, अनायास, और ज्ञात है, इष्ट है। यही परमेश्वर है। इसे आस्तिक, नास्तिक, कर्मी, विधर्मी—सभी चाहते हैं; क्योंकि मूलतः लक्ष्य सभीका एक है। यह अज्ञात होता है, तब इसका नाम परोक्ष परमेश्वर होता है। वस्तुतः यह अनुभवस्वरूप आत्मा ही है।

* * *

सत्य सर्वदा सरल होता है। उसमें दाव-पेंच नहीं होते। चेष्टा सत्यकी प्राप्तिके लिये नहीं, असत्यके त्यागके लिये करनी चाहिये।

★

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• उपलब्धि ही सुख है

प्र०—सुख इष्ट है या सुखकी उपलब्धि (ज्ञान) ?

उ०—उपलब्धिके अतिरिक्त सुख कुछ नहीं है। उपलब्धि न हो तो सुख क्या ?

प्र०—ठीक है, परन्तु उपलब्धिका विशेष आकार सुख है।

उ०—फिर तो वह नाशवान् और दुःखपरिणामी होगा; क्योंकि आकार एक-से नहीं रहते, बदलते रहते हैं।

प्र०—ऐसा क्यों ?

उ०—तत्त्व नित्य होता है, आकार नहीं। अनुपलब्ध सुखकी सत्ता नहीं है। उपलब्धिमात्र ही सुख है।

प्र०—सुखकी क्षणिकतासे उपलब्धि भी क्षणिक क्यों नहीं ?

उ०—क्षणिकता उपलब्धिका विषय है। इसलिये उपलब्धि अकाल है। आकारगत क्षणिकता उपलब्धिमें आरोपित। उपलब्धि ही सुख है। अकाल ही सत्य है।

प्र०—उपलब्धिमात्र ही सुख है, क्या अभिप्राय ?

उ०—चाहे जिस आकारकी उपलब्धि हो, वह उपलब्धिका परिणाम नहीं, विवर्त्त ही है। इसलिये कोई भी आकार प्रतीत हो अर्थात् सभी आकार तत्त्वतः उपलब्धि स्वरूप ही हैं। उपलब्धि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ही सुख है, उसका आकार चाहे सुख हो, दुःख हो या और कुछ। जो कुछ प्रतीत हो रहा है, वही तो सुख है। यह भावना नहीं, सत्य है।

* * *

● *पसन्दका संसार*

प्र०—अनादिकालसे इस संसारको सँवारने सुधारनेका प्रयास चल रहा है। यह कितना सुधर जायगा, तब तुम इसे पसन्द करोगे ?

उ०—संसारका स्वभाव ही सड़ना है, बिगड़ना है। इसे राम, कृष्ण, शङ्कर, रामानुज, बुद्ध, महावीर, गान्धी—सबने सुधारनेका प्रयत्न किया; परन्तु यह अपनी गतिसे बहता जा रहा है। किसीके रोके न रुका, किसीके सँवारे न सँवरा। योगी अरविन्दके अथक प्रयत्नके बाद भी धरतीपर स्वर्ग नहीं उतरा। इसलिये कोई भी मुमुक्षु इसकी दिव्यतापर विश्वास नहीं कर सकता। वह तो दृश्यसे मुक्त होकर अपने द्रष्टा स्वरूपमें, बन्धनसे छूटकर अपने मुक्तस्वरूपमें स्थित होनेके लिये ज्ञान-सम्पादन करेगा। सुधारनेकी चेष्टा सब अपनी-अपनी वासनाके अनुसार करते हैं। काम पूरा नहीं होता, समय पूरा होता है। परमात्मा उसको मिलता है जो इसकी ओरसे आँख बन्द करके उसको पानेके लिये चल पड़ता है। चिन्मात्र ब्रह्ममें गोलोक भी स्फुरण है और धरती भी। स्फुरणमात्रमें बनाने-बिगाड़नेकी क्या आवश्यकता ?

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

• मस्ती और निष्ठा

किसीने महात्मासे कहा—'दुनियां बिगड़ रही है, बड़े-बड़े अनर्थ हो रहे हैं और तुम मस्तीमें बैठे रहते हो, कोई फिक्र ही नहीं है, क्या बात है ?'

महात्मा—'सब दीख ही तो रहा है। भक्तके लिये ईश्वरकी लीला है, आत्मनिष्ठके लिये अपनी स्फुरणा है, जिज्ञासुके लिये मायाका खेल-तमाशा है। अरे भाई, सब ब्रह्म ही तो है! दृङ्मात्रके सिवाय दृश्यकी सत्ता ही क्या है। तुम दृश्यको रोक रखना चाहते हो और विवेकी होनेका अभिमान भी रखते हो!

* * *

प्र०—महाराज, क्या आप ब्रह्मनिष्ठ हैं ?

उ०—निष्ठा है वृत्तिकी स्थिरता। वह जीवमें होती है। क्या ब्रह्म निष्ठावान् होता है ? ब्रह्ममें निष्ठा कैसी ? ब्रह्म तो ब्रह्म ही है।

* * *

जिज्ञासु—आप तो जीवन्मुक्त है महाराज! आपमें बड़ी मस्ती दीखती है।

ज्ञानी—अरे बावरे! मस्ती तो देहवान्‌का धर्म है। मस्त-बेमस्त जीव होता है। ब्रह्म तो मस्ती-बेमस्तीमें ज्यों-का-त्यों है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

● शान्तिका उपाय

कचने सम्पूर्ण शास्त्रोंके स्वाध्याय एवं मीमांसाके अनन्तर पिताके सामने निवेदन किया—'पिताजी, सब जान लिया, परन्तु शान्ति नहीं मिली।'

बृहस्पतिने कहा—'बेटा, त्यागके बिना शान्ति नहीं मिलती।'

और उसने सब कुछ त्याग दिया। केवल कौपीन-कमण्डलु रखकर वर्षों व्यतीत हुए। एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष—त्यागका संकेत मिलनेपर कौपीन-कमण्डलु भी छोड़ दिया। फिर भी शान्ति नहीं मिली। पिताके संकेतपर चिता जलाकर शरीर भस्म करनेके लिये उद्यत हुआ। पिताने हाथ पकड़ लिया, बोले—

'बेटा, जबतक वासनाओंसे भरा चित्त है, उसके प्रति अहंता-ममता है, तबतक देह भस्म करनेसे कुछ न होगा। वासनाके अनुसार देहपर देह मिलते जायँगे। वस्तुतः देहका त्याग त्याग नहीं है, चित्तका त्याग ही त्याग है। चित्त-त्याग ही शान्ति है, चित्त-त्याग ही मुक्ति है।'

कच—'चित्त त्यागकी युक्ति क्या है, पिताजी?'

बृहस्पति—'अपने आत्माको ब्रह्म जान लेनेसे चित्त, चेत्य और चित्ति अर्थात् त्रिपुटीका बाध हो जाना ही चित्तका सच्चा त्याग है। फिर तो फुरता हुआ चित्त भी अकिंचित्कर है।'

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

(स्वामीजीके एक पत्रका सार)

'बचपनसे ही मेरा त्याग–पक्षकी ओर झुकाव है। मुझे संसारकी कोई वस्तु इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं जँचती, जिसके लिये संघर्ष करना आवश्यक हो। एक अन्तःकरणमें रहनेवाली शान्ति कोटि-कोटि मानव हृदयके लिये शान्तिका उद्गम बन जाती है। यह अवश्य है कि त्याग तपस्याकी अपेक्षा रखता है। जो तपस्वी संयमी नहीं है, वह त्यागी भी नहीं हो सकता। '**चौथेपन नृप कानन जाहीं**' के आदर्शके अनुसार आपको घरपर ही रहकर—बिना किसी संघर्षके लोकहितके लिये अपना जीवन उत्सर्ग कर देना चाहिये।'

* * *

● *बंधन कहां?*

आवरण लक्ष्यपर नहीं है। अपना आत्मा ही अविचारित-अज्ञात होकर आवृत-सा प्रतीत हो रहा है। अज्ञातरूपसे आत्मा ही अन्य-सा, अप्राप्त-सा भासता है। न केवल लक्ष्य स्वतः प्राप्त है, वस्तुतः साधन भी स्वतः प्राप्त ही है। अनन्तता अपना स्वयंसिद्ध स्वरूप है, तो ज्ञान क्या अपना स्वयंसिद्ध स्वरूप नहीं है? अनित्यता हमें छू नहीं सकती—हम विविक्त हैं। अद्वितीय असङ्गमें राग कहाँ? हम विरक्त हैं। मन, इन्द्रिय, कर्म, शरीर, अभिमान, मनोराज्य—इनका विषय या आश्रय आत्मा नहीं है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

फिर षट्सम्पत्तिकी न्यूनता अपने स्वरूपमें कहाँ? बन्धन, किसका, किसको और क्या?

* * *

निश्चय, निर्णय एवं स्थितिको श्रवण, मनन और निदिध्यासन कहते हैं। पिछले दो पहलेकी अदृढ़ता या प्रतिबन्धको मिटाते हैं। निश्चय अन्य विषयक हो तो प्रवर्तक होता है। स्व विषयक निश्चय साध्यका नहीं, सिद्धका ही होता है। सिद्ध वस्तुका अनिश्चयसे कुछ बिगड़ता नहीं, निश्चयसे बनता नहीं। वह तो ज्यों का त्यों रहता है, केवल सत् हो तो। चित् तो निश्चय अनिश्चयका प्रकाशक है। उसे उनकी आवश्यकता नहीं। आनन्द हो और स्व हो तो निश्चयका कोई प्रयोजन ही न रहा। क्या अपना होना, जानना और प्रियता अपरोक्ष निश्चित नहीं है?

* * *

• गिलास साफ कर लो!

ऋषिकेशमें चन्द्रभागा नदीके पारकी झाड़ियोंमें एक तपस्वी सन्त रहते थे। वर्षाके दिन, पहाड़ी नदी, वेगवती धारामेंसे होकर किसी प्रकार वहाँ पहुँचा। वे महात्मा बड़े तपस्वी, आसूर्योदयास्त सूर्यकी ओर मुख करके खड़े रहते थे। तेजस्वी मुखमण्डल, लाल-लाल आँखें। उनके पास जानेको हुआ, तो वे मेरी ओर ढेले चलाने लगे। डरकर मैं वहीं साष्टांग लोट गया। फिर उठा और सहमता हुआ उनके पास पहुँचा। वे प्रसन्न हुए और बोले—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'अपनी बुद्धिमें शुद्ध ज्ञान, शुद्ध बोध रखना हो, तो उसे निर्विषय बनाओ। 'मेरा'पन और 'मैं'पन मिटाओ। गिलासमें मिट्टी भरी हो और उसमें दूध डालो तो वह खराब हो जायगा। पहले गिलास तो साफ करलो। तुम्हारा अन्तःकरण ही वह गिलास है। उसे शुद्ध करलो।'

* * *

• मोक्ष आत्माका स्वरूप ही है

धर्म चरित्रशुद्धिके द्वारा अन्तःकरण-शुद्धिका हेतु है, इसलिये वह तत्त्वज्ञानमें परम्परा साधन है। शम-दमादि ज्ञानके कारण अर्थात् अन्तःकरणके शोधक हैं, इसलिये बहिरङ्ग साधन हैं। श्रवण-मननादि जीव-पदार्थ अर्थात् ईश्वर और जीवके स्वरूपके शोधक हैं, अतः अन्तरङ्ग साधन हैं। अविद्याकी निवृत्ति केवल तत्त्वज्ञानसे होती है, इसलिये मोक्षका साक्षात् साधन तत्त्वज्ञान ही है। तत्त्वज्ञानसे अप्राप्तकी प्राप्ति और प्राप्तकी निवृत्ति नहीं होती, बल्कि नित्य प्राप्तमें अप्राप्तिका और नित्य निवृत्तमें अनिवृत्तिका जो भ्रम होता है उसकी निवृत्ति होती है। इसलिये मोक्ष अपने आत्माका स्वरूप ही है। अर्थात् आत्मा नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त ब्रह्म ही है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्न आत्मा नहीं है। विष्ठा और भस्म भी आत्मा नहीं हैं। फिर दोनोंके बीचकी अवस्था देह और इन्द्रियाँ आत्मा कैसे हो सकती हैं? जिसकी पूर्वावस्था आत्मा नहीं है और परावस्था आत्मा नहीं है, वह वस्तु मध्यमें भी अविद्यासे आत्मा मानी हुई है।

* * *

जैसे एक ही बीज पुआल, भूसी और चावल—तीन रूप धारण करता है, वैसे ही भोजन किया हुआ अन्न विष्ठा, मांस और बुद्धिका रूप ग्रहण करता है। यह सब जड़के विकार हैं, आत्मा नहीं।

* * *

जैसे मल जब शरीरसे अलग हो जाता है और दोष-बुद्धिसे छोड़ दिया जाता है, तब उसकी निन्दा-स्तुतिसे अपने ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वैसे ही जब विवेकके द्वारा स्थूल-सूक्ष्म शरीरका परित्याग कर दिया जाता है, तब उनमें बतलाये हुए दोषोंका अपने ऊपर प्रभाव नहीं पड़ता।

* * *

जिसकी दृष्टिमें शत्रु-मित्र एवं अपने शरीरमें एक ही शुद्ध-बुद्ध-मुक्त आत्मा विद्यमान है, उस विवेकी पुरुषको वैसे ही राग-द्वेष नहीं होता, जैसे अपने शरीरके अङ्गोंमें।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तत्त्वज्ञ महापुरुषकी दृष्टिसे न कुछ त्याज्य है और न कुछ ग्राह्य। वह सभीको स्वीकृति देता है और सभीका निषेध करता है; क्योंकि व्यवहारमें प्रपंच फुर रहा है और स्वरूपमें उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। श्रीसुरेश्वराचार्यने कहा है—

सर्वमेवानुजानाति सर्वमेव निषेधति।
भेदात्मलाभोऽनुज्ञा स्यान्निषेधोऽतत्स्वभावतः॥

* * *

इस प्रतीयमान प्रपंचमें मुझसे भिन्न कोई दूसरा आत्मज्ञानी नहीं है और न तो मुझसे भिन्न कोई अज्ञानी ही है। जो अपने कूटस्थ चैतन्य स्वरूपसे बिना परिणामिनी वृत्तिके ही ऐसा अनुभव करता है, वह श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता है। क्या ही श्रेष्ठ वचन है :—

नेहात्मविन्मदन्योऽस्ति न मत्तोऽज्ञोऽस्ति कश्चन।
इत्यजानन् विजानाति यः स ब्रह्मविदुत्तमः॥

* * *

सम्पूर्ण दृश्यमान प्रपंच अपने स्वयंप्रकाश अधिष्ठानसे अभिन्न ही है। यही कारण है कि ब्रह्मज्ञानी पुरुष प्रवृत्ति अथवा निवृत्तिका पक्षपात नहीं करता; क्योंकि उसके लिये दोनों अपने स्वरूप ही हैं।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वस्तुतः सिद्धान्त यह है कि ब्रह्मज्ञान न किसीको बनाता और न बिगाड़ता। वह तो वस्तुतत्त्व जैसा है, वैसा दिखा भर देता है। प्रपञ्च तो अपने-आप ही बधित हो जाता है। प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों प्रपंचमें हैं; इसलिये बोध हो जानेपर दोनों ही अपने-आप मर जाती हैं, उनकी ओर दृष्टिपात करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं।

* * *

यदि मेरी निन्दा करनेसे किसीको सन्तोष होता है तो यह बिना किसी प्रयत्नके ही उसका अनुग्रह मुझे प्राप्त हो गया; क्योंकि संसारमें लोग दूसरोंके सन्तोषके लिये परिश्रमसे कमाये हुए धनका दान करते हैं। मुझे तो कुछ नहीं करना पड़ा।

* * *

संसारमें लोग दीन हैं, दुःखी हैं। यदि मुझपर लाञ्छन या कलङ्क लगाकर किसीको क्षणभरके लिये भी हर्ष होता है, तो वह चाहे मेरे सम्मुख और चाहे पीठ-पीछे, चाहे जितना दोषारोपण कर ले, मुझे कोई आपत्ति नहीं है; क्योंकि इस दुःखबहुल जगत्में किसीका क्षणभरके लिये आनन्दित होना भी दुर्लभ है।

* * *

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धन्य है, धन्य क्रोध देव! तुम्हें पुनः पुनः धन्यवाद है; क्योंकि तुम जिसके मनमें पैदा होते हो, उसको तो देते हो जलन और जिसपर पैदा होते हो, उसको देते हो वैराग्य और अपनी त्रुटियोंका ज्ञान।

* * *

• मानसके वासी हंस

आकाशमें झुण्डके झुण्ड हंस उड़े आ रहे थे। धरतीपर मांसके टुकड़े खाते हुए चीलोंने देखा। डर गये। अपने-अपने चोंचमें टुकड़े दबाकर भागने लगे। उनका भय और दुःख देखकर हंसोंने कहा—'प्यारे भाइयो! हम मानसरोवरके वासी हैं, कमलका रस पीते हैं, मोती चुगते हैं, नीर-क्षीर-विवेक करते हैं। हम मांस नहीं खाते। तुम स्वस्थ चित्तसे अपना भोजन करो, हम जाते हैं।' हंस अपने पथपर बिना रुके उड़ते रहे।

हंस हैं परमहंस महात्मा ब्रह्मानन्दमें मग्न। चील हैं संसारी विषयासक्त मनुष्य। वे व्यर्थ ही डरते हैं कि यह लोग कहीं हमारा संसारी सुख छीन न ले जायँ? महात्मा उन्हें निर्भय करके अपने पथपर चलते रहते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संन्यास

प्र०—संन्यासका स्वरूप क्या है ?

उ०—सम् अर्थात् विधिपूर्वक, नि अर्थात् पूर्णरूपसे और आस अर्थात् त्याग कर देना। अथवा ज्ञानपूर्वक सम्पूर्णतया अपने स्वरूप ब्रह्ममें निष्ठावान् हो जाना।

प्र०—संन्यासका क्या प्रयोजन है ?

उ०—अर्थ, धर्म और भोगकी चिन्तासे सर्वथा मुक्त होकर वेदान्तज्ञानके लिये प्रयत्न करना। इससे सम्पूर्ण अनर्थोंकी निवृत्ति होकर परमानन्द स्वरूप आत्मा ब्रह्मकी सिद्ध एकताका साक्षात्कार होता है। संन्यास अन्तःकरण शुद्धिका असाधारण साधन है।

प्र०—संन्यासकी विशेषता क्या है ?

उ०—संन्यासमें मुख्यतः यह विधि सम्पन्न की जाती है—

१. अपने जन्म-जन्मके किये हुए सम्पूर्ण पापोंका प्रायश्चित्त।

२. संसारके सम्पूर्ण सम्बन्धोंसे अलगाव।

३. विधिपूर्वक यज्ञोपवीताहि संस्कारोंके द्वारा स्वीकृत अपने कर्तव्योंका विहित रीतिसे परित्याग। अर्थात् पितृ ऋण, ऋषि ऋण, देव ऋणसे मुक्त होकर अकर्ता, अभोक्ता आत्माके अनुसन्धानकी ओर अग्रसर होना।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

४. विरजा होम अर्थात् निवृत्तिका दृढ़ निश्चय ।

५. प्रैषोच्चारण अर्थात् सब प्राणियोंको अभयदानका संकल्प ।

इन क्रियाओंसे संन्यासकी विशेषता स्पष्ट है। जैसे कोई विधानके अनुसार कोई पद स्वीकार करे तो उसके ऊपर बहुत-से कर्तव्योंका दायित्व आ जाता है और जब वह विधानके अनुसार त्यागपत्र दे देता है तब उनसे मुक्त हो जाता है। वैसे ही दूसरे आश्रयोंमें जिन कर्तव्योंका पालन न करनेसे पाप लगता है, संन्यास आश्रममें उनके पालनकी आवश्यकता नहीं रहती; क्योंकि उसने विधानके अनुसार त्याग कर दिया है। जो विधानके विपरीत त्याग करते हैं, उनको त्यागका भी पाप लगता है और अनधिकारी होनेके कारण उन्हें संन्यासका फल अन्तःकरणकी शुद्धि अथवा ब्रह्मलोककी प्राप्तिसे वञ्चित ही रहना पड़ता है।

प्र०—जिसको तत्त्वज्ञान हो गया हो, उसके लिये संन्यासका क्या उपयोग है ?

उ०—ज्ञानसम्प्रदायकी रक्षा। ज्ञानके पूर्व अन्तःकरणशुद्धिके लिये की हुई तपस्याकी स्वाभाविक अनुवृत्ति, बहिर्मुखता, विसंवाद आदि दुर्गुणोंका निवारण, लौकिक दुःखोंकी निवृत्ति एवं निरंकुश तृप्ति ही ज्ञानोत्तर संन्यासका प्रयोजन है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्र०—आपको संन्यास लेनेपर किसी नवीनताका अनुभव हुआ क्या ?

उ०—मुझे किसी नवीनताका अनुभव नहीं हुआ। केवल कपड़े बदल गये, मैं तो ज्यों-का-त्यों ही रहा।

प्र०—'मैं संन्यासी हूँ,' यह भाव आपको बना या नहीं ?

उ०—नहीं बना; क्योंकि मेरे चित्तसे 'मैं जीव हूँ' यह कल्पना पहले ही कट चुकी थी, मिट चुकी थी। इसलिये 'मैं मनुष्य हूँ, हिन्दू हूँ, ब्राह्मण हूँ' इन अभिमानोंका पहले ही बाध हो चुका था। इसलिये 'मैं ब्राह्मण हूँ' के स्थानपर 'मैं संन्यासी हूँ' इस अभिमानान्तरकी उत्पत्ति नहीं हुई। यह सब व्यवहार तो अज्ञ दृष्टिसे है। स्व दृष्टिमें तो अज्ञ, अन्य और व्यवहार भी अपने स्वरूप ही हैं।

प्र०—संन्यासके समय आपको कुछ विलक्षणता मालूम पड़ी ?

उ०—संन्यास ग्रहण करनेवाली रात्रिमें बैठे ही बैठे मैंने स्वप्न देखा कि मैं एक ऊँचे सिंहासनपर संन्यासीके रूपमें स्थित हूँ और मेरे पिता-पितामह दोनों ओर खड़े होकर वेदमन्त्रोंका उच्चारण करके मेरा अभिषेक कर रहे हैं। उन्होंने अत्यन्त प्रसादपूर्ण मुद्रामें मेरे संन्यासका अभिनन्दन किया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्र०—संन्यासी कौन है ?

उ०—जिसकी प्रदीप्त अन्तर्दृष्टिकी अग्निज्वालामें स्थान, व्यक्ति और वस्तुका मोह भस्म हो गया है।

प्र०—महन्त कौन है ?

उ०—जो लौकिक सम्पत्तियों अर्थात् मठ, सिंहासन, विद्या, धन, शिष्यसंख्या आदिके द्वारा अपनेमें महत्ताका आरोप करे सो महन्त।

प्र०—सन्त कौन है ?

उ०—जो अपनेमें किसी भी कारणसे किसी विशेषताका आरोप न करके निर्विशेष सन्मात्र ब्रह्मसे एक अनुभव करे सो सन्त। दत्तात्रेय, ऋषभदेव, जड़भरत, ऋभु, निदाघ, शुकदेव, वामदेव आदि सन्त हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रपन्न प्रार्थना

संसारसागरान्नाथौ मित्रपुत्रगृहाकुलात् ।
गोप्तारौ मे युवामेव प्रपन्नभयभञ्जनौ ॥ १ ॥

मेरे प्यारे स्वामी ! युगलकिशोर ! मित्र, पुत्र और गृहसम्बन्धी तरङ्गोंसे आकुल-व्याकुल इस संसार-सागरसे आप ही दोनों मेरी रक्षा कर सकते हैं; क्योंकि आप प्रपन्न जनताके भय-भञ्जन हैं ।

योऽहं ममास्ति यत्किञ्चिदिह लोके परत्र च ।
तत्सर्वं भवतोरद्य चरणेषु समर्पितम् ॥ २ ॥

मैं जो कुछ हूँ और इस लोक तथा परलोकमें मेरा जो कुछ है, वह सब आज मैं आपके चरणोंमें समर्पित करता हूँ । वह पहलेसे भी आपका ही था, भ्रमवश मैंने अपना मान रखा था । अब ऐसी भूल कभी नहीं करूँगा ।

अहमस्म्यपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः ।
अगतिश्च ततो नाथौ भवन्तावेव मे गतिः ॥ ३ ॥

मैं अपराधोंका निवासस्थान हूँ । मैंने साधन सब छोड़ दिये हैं । न मुझे मार्गका ज्ञान है और न चलनेकी शक्ति । इसलिये मेरे प्यारे युगल सरकार केवल आप ही दोनों मेरे साधन, साध्य एवं आश्रय हैं ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तवास्मि राधिकाकान्त कर्मणा मनसा गिरा ।
कृष्णकान्ते तवैवास्मि युवामेव गतिर्मम ॥ ४ ॥

हृदयेश्वर, राधिकारमण ! मैं कर्मसे, मनसे, वाणीसे आपका ही हूँ । कृष्ण प्रिये ! स्वामिनि श्री राधारानी ! मैं आपका ही हूँ । आप ही दोनों मेरे गति, पति, मति एवं रतिके एकमात्र आश्रय हैं ।

शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ ।
प्रसादं कुरुतं दास्यं मयि दुष्टेऽपराधिनि ॥ ५ ॥

हे राशि-राशि करुणाके निधान ! मैं आप दोनोंकी शरणमें आया हूँ । यद्यपि दुष्ट हूँ, अपराधी हूँ, अनधिकारी हूँ, तथापि आप अपने कोमल स्वभावसे ही मुझपर प्रसन्न हों और प्रसादके रूपमें मुझे अपना दास्य (सेवा) दान करें ।

इत्येवं जपतां नित्यं स्थातव्यं पद्यपञ्चकम् ।
अचिरादेव तद्दास्यमिच्छता मुनिसत्तम ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे नारद ! जो व्यक्ति शीघ्रसे शीघ्र युगल सरकारके दास्य अथवा सेवाका इच्छुक हो, उसे प्रतिदिन इन पाँच पद्योंका भावना सहित जप करते रहना चाहिये दीर्घ काल तक । इससे उसका मनोरथ सिद्ध होता है ।

—पद्मपुराण, पातालखण्ड

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ट्रस्टका धार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रकाशन:—

माण्डूक्य प्रवचन		५–००
भक्ति-रहस्य		२–००
सत्सङ्ग, साधन और फल		२–००
श्रीमद्भागवत रहस्य		२–५० द्वि. संस्करण
सुगम भक्तिमार्ग		२–००
भगवान् के पाँच अवतार		२–००
ईशावास्य प्रवचन		२–२५
महाराजश्रीका एक परिचय		०–२५
आनन्द वाणी भाग १.		०–५०
,, ,, ,, २.		०–५०
श्री पुरुषोत्तम योग		२–५०
मोहन नी मोहनी	(गुजराती)	०–५०
चरित्रनिर्माण आणि ब्रह्मज्ञान	(मराठी)	१–००
श्रीमद्भागवत रहस्य	(सिन्धी)	२–००

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi